युग निर्माण योजना

नवम्बर – 2025

₹ 13 – एक प्रति । ₹ 150 – वार्षिक । वर्ष – 62 – अंक –5

यह पत्रिका आप स्वयं पढ़ें। कम से कम दस अन्य परिचितों को पढ़ाएँ, ताकि ज्ञान का आलोक जन-जन तक पहुँच सके।

7–गायत्री–मंत्र गायन के अनेक लाभ
15–यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते
29–अहंता छोड़िए ! विनम्र बनिए !! महान बनिए !!!
32–वयोवृद्ध की उपेक्षा न करें

गायत्री तपोभूमि, मथुरा

परम वंदनीया माताजी के अवतरण दिवस की पूर्व संध्या पर संगीत संध्या

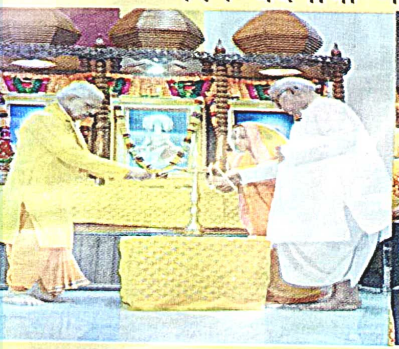

मातृशक्ति सम्मेलन

परमपूज्य गुरुदेव के अवतरण दिवस की पूर्व संध्या पर संगीत संध्या

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्
उस प्राणस्वरूप, दुःखनाशक, सुखस्वरूप, श्रेष्ठ, तेजस्वी, पापनाशक, देवस्वरूप परमात्मा को हम अपनी अंतरात्मा में धारण करें । वह परमात्मा हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करे ।

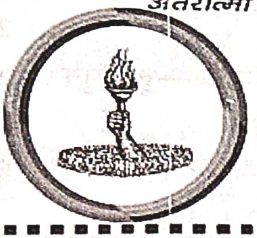

युग निर्माण योजना

नैतिक एवं सांस्कृतिक पुनरुत्थान का मासिक पत्र

संस्थापक / संरक्षक
वेदमूर्ति तपोनिष्ठ युगद्रष्टा
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य
एवं
माता भगवती देवी शर्मा
संपादक
ईश्वर शरण पाण्डेय
सहसंपादक
सूर्यमणि तिवारी
दीनदयाल अमृते
कार्यालय
युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
गायत्री तपोभूमि, मथुरा
पि० को० 281003
दूरभाष नंबर
(0565) 2530115, 2530128, 2530399,
मो० 09927086287, 09927086289
(इन पर एस.एम.एस. न करें)
समय : प्रातः 9 से सायं 5 बजे
ई-मेल :
yugnirman@yugnirmanyojna.org
Website : www.yugnirmanyojna.org
नवंबर — 2025
प्रकाशन तिथि : 17.10.2025
वर्ष : 62 **अंक : 5**
वार्षिक शुल्क : 150 रु०
आजीवन (बीसवर्षीय) : 3000 रु०
वार्षिक विदेश : 2200 रु०

हम भावनाशील बनें

सच्ची बात लोगों को कटु लगती है; ऐसा कहा-सुना जाता है, पर यह अंशतः ही सत्य है। यदि बोलने की शैली में स्नेह, सद्भावना मिली है और जिससे कहा जा रहा है, उसके सम्मान की रक्षा का भी ध्यान रखा जाए तो सत्यवचन कभी संकट उत्पन्न नहीं करता। प्रेममिश्रित सत्य यदि सद्भावनापूर्वक सुधार की आशा से कहा गया है, उसमें समाधान एवं सुझाव है तो कोई कारण नहीं कि किसी के मन पर उसकी चोट पहुँचे और शत्रुता होने का संकट उत्पन्न हो। किसी को यह कहा जाए कि तुमने अनीति से धन अर्जित किया है और कृपणतापूर्वक जोड़ा है तो उचित न होगा। यह कहना ज्यादा अच्छा है कि आपने जो कमाया है, उसका श्रेष्ठ उपयोग यही हो सकता है कि उसका एक महत्त्वपूर्ण अंश लोक-मंगल के कार्यों में लगाकर श्रेय के भागी बनें। इससे चोट पहुँचाए बिना सुझाव देकर, वह श्रेष्ठ हल उपस्थित किया जा सकता है, जिसके आधार पर वर्तमान स्थिति में जो सर्वोत्तम हो सकता है, उसे किया जा सके।

जीवन की सफलता और सार्थकता का भवन छोटे-छोटे सद्गुणों की ईंटों और सतर्कता के गारे-चूने से चिना जाता है। यदि हम जीवन को महत्त्वहीन न समझें और उसके सदुपयोग का समुचित ध्यान रखें तो उस लक्ष्य तक सहज ही पहुँच सकते हैं, जिसके लिए यह मनुष्य जीवन की महान विभूति उपलब्ध हुई है। ❐

अनुक्रमणिका

- आवरण पृष्ठ—1 — 1
- आवरण पृष्ठ—2 — 2
- हम भावनाशील बनें — 4
- **एक प्रेरणाप्रद प्रसंग**
  हरिबाबा का बाँध — 5
- गायत्री मंत्र गायन के अनेक लाभ — 7
- परद्रव्येषु लोष्ठवत् — 8
- **बाल दिवस पर विशेष**
  बच्चे सभ्य, शालीन, सेवाभावी बनें — 10
- अमूल्य है—वाणी का दान — 12
- यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते... — 15
- शिक्षाप्रद कहानियाँ — 18
- **आत्मीय अनुरोध**
  यह दो माह पत्रिका विस्तार के लिए लगाएँ — 19
- **ज्ञातव्य** — 21
- एक चमत्कारिक औषधि—लहसुन — 23
- **प्राकृतिक चिकित्सा**
  तीव्र रोग शत्रु नहीं, हमारे मित्र — 26
- अहंता छोड़िए! विनम्र बनिए!!
  महान बनिए!!! — 29
- वयोवृद्ध की उपेक्षा न करें — 32
- **गुरु नानकदेव जयंती पर विशेष**
  महान संत : गुरु नानकदेव — 35
- गायत्री तपोभूमि के बैंक खातों का विवरण — 37
- उज्ज्वल भविष्य की झलक (कविता) — 38
- आवरण पृष्ठ—3 — 39
- आवरण पृष्ठ—4 — 40

नवंबर-दिसंबर, 2025 के पर्व-त्योहार

रविवार	02 नवंबर	देवप्रबोधिनी एकादशी/तुलसी विवाह
बुधवार	05 नवंबर	गुरु नानक जयंती/ पूर्णिमा/देव दीपावली
शुक्रवार	14 नवंबर	बाल दिवस
शनिवार	15 नवंबर	उत्पत्ति एकादशी
सोमवार	01 दिसंबर	मोक्षदा एकादशी/ गीता जयंती
गुरुवार	04 दिसंबर	दत्तात्रेय जयंती/ पूर्णिमा
सोमवार	15 दिसंबर	सफला एकादशी
गुरुवार	25 दिसंबर	क्रिसमस
बुधवार	31 दिसंबर	पुत्रदा एकादशी

एक प्रेरणाप्रद प्रसंग

हरिबाबा का बाँध

गंगा के जल की उफनती लहरें किनारों के अनुशासन को तोड़ती, तिरष्कृत करती, बढ़ती जा रही थीं। जहाँ तक नजर जाती, जल-ही-जल दिखाई दे रहा था। स्थिति बाढ़ की थी। किसानों की हजारों एकड़ जमीन जलमग्न थी। कितने ही परिवार बेघर-बार हो गए थे। सैकड़ों पशु पानी में बह गए। प्रकृति के इस प्रकोप से ग्रसित बदायूँ (उत्तर प्रदेश) जिले के गँवा ग्राम के निवासी गुमसुम थे। बाढ़ को देखकर उसासें भर लेते थे। समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करें?

उन्हीं दिनों एक संत गाँव में पधारे। प्रवेश करते ही दिखाई पड़ा, दुर्दशा का तांडव-नर्तन। घूम-फिरकर स्थिति का जायजा लिया, ग्रामवासियों से परिस्थितियों की जानकारी ली। पूछा—''अब तक इसके लिए क्या किया गया?''

''सरकार से निवेदन।'' अनेक कंठों से वाणी निकली। ''इसके अतिरिक्त और कुछ।'' सभी की ओर दृष्टि घुमाते हुए उनका अगला सवाल था।

''भला इस भीषण प्रकोप के सामने हम लोग और करते भी क्या?'' ''प्रतिवर्ष धन-जन की हानि सहने के अलावा।'' भीड़ से घिरे साधु ने वाक्य पूरा किया।

''आप लोग कुल ग्रामवासी कितने हैं?'' कुछ क्षण सोचते हुए उन्होंने पूछा।

''एक हजार युवक और अधेड़, स्त्री-बच्चों, वृद्धों को मिलाकर यह संख्या तकरीबन ढाई हजार के आस-पास हो जाएगी।'' वे बोले—''कर्मठता की कसौटी पर इसमें से यदि एक हजार भी खरे उतरें, तो दो हजार भुजदंड क्या कुछ नहीं कर सकते? जिनमें इस आपत्तिकाल में कुछ करने का उत्साह है, कल हमारे साथ आएँ।''

अगले दिन उन्होंने प्रातः 'हरि बोल' का नारा लगाया और अपने एक हाथ में फावड़ा और दूसरे हाथ में टोकरी लेकर चल दिए बाँध बनाने के लिए। वर्षा थम चुकी थी। जल किनारों की मर्यादा स्वीकारता जा रहा था। गाँव के सैकड़ों स्त्री-पुरुष उनके पीछे चल पड़े। हरि बोल का सामूहिक स्वर उच्चरित होने लगा, मिट्टी खुदने लगी। बाँध तैयार होने लगा। इस अद्‌भुत दृश्य को देखने आने वालों की तादाद कम न थी। जो आता कार्य में संलग्न समुदाय के साहस व कर्मनिष्ठा की सराहना किए बगैर न रहता। आस-पास के गाँववाले अपनी भागीदारी बाँटने आने लगे। दिन-प्रतिदिन श्रमदानियों की संख्या बढ़ती जा रही थी।

उन दिनों की अँगरेज सरकार का भी ध्यान इधर गया। संत के प्रेरक व्यक्तित्व के सामने उसे घुटने टेकने पड़े। अनेकों ओवरसीयर तथा इंजीनियर भी आ जुटे। अगली बरसात के पूर्व ही बाँध बनकर तैयार हो गया। मनुष्य ही क्यों उस क्षेत्र के पशुओं को भी राहत मिली। इस बाँध पर किए गए कार्य ने शत-सहस्त्र-लक्षाधिक नेत्रों को अपनी ओर आकर्षित किया। सर्वत्र आत्मनिर्भरता की सराहना की गई। हर किसी के मुँह से निकला कि यदि ऐसे संत

नेतृत्व को सँभाल लें तो लोकजीवन का उद्धार हुए बिना न रहे।

लोकजीवन के उद्धारक यह संत थे— हरिबाबा, जिनके नाम पर बना 'हरिबाबा का बाँध' आज भी उनके कर्तृत्व का मुखर स्मारक है।

बाँध बन जाने के बाद बाबा ने वहाँ एक कुटिया बना ली। अभी उनका काम समाप्त कहाँ हुआ था? इस क्षेत्र में परिव्याप्त नैतिक पतन उन्हें इस गंगा की बाढ़ से भी भयंकर प्रतीत हुआ। जो प्रतिवर्ष धन-जन को नष्ट करता था। गाँजा, शराब जैसे अनेक दुर्व्यसनों में बँधे-फँसे लोग अपनी जीवन-संपदा को यों ही फुलझड़ी की तरह जलाकर खुश हो रहे हैं। यह देख उनका निर्मल मन कुछ करने के लिए आतुर हो उठा।

वह अकेले थे, पर इससे क्या? निविड़ अंधकार से निपटने के लिए जब माचिस की एक तीली अपने को जलाने का साहस सँजोकर प्रकाश प्रकट करती है तो एक ही क्यों, अनेकों दीपक उससे अपने को ज्योतिर्मय कर लेते हैं, प्रकाश बाँटने लगते हैं। कीर्तन-सत्संग का क्रम चल पड़ा। इसमें आने वाले हरेक को वे सदाचार की सीख देते। अनेकों ने व्यसनों का त्याग किया, जिंदगी जीने की सच्ची राह पकड़ी।

जिंदगी जीने की राह को स्वयं के लिए खोजने, औरों को सुझाने वाले इस संत का जन्म होशियारपुर जनपद के मेंगरवाला ग्राम में विक्रमी संवत् 1941 को हुआ था। पिता प्रताप सिंह ने उनका नाम रखा दीवान सिंह। पिता की लालसा थी कि बालक पढ़-लिखकर बड़ा अधिकारी बने। घर के प्रत्येक कोने में धन के ढेर लगा दे, पर गुरुवर सच्चिदानंद के सत्संग के प्रभाव से वे जीवन की दिशा खोज चुके थे। उस पर चलना बाकी था। माता-पिता ने उनके सामने विवाह का प्रस्ताव रखा तो उन्होंने स्पष्टतया नकारते हुए कहा—"जीवन में करने के लिए इतना कुछ महत्त्वपूर्ण है, जिसके सूझ पड़ने पर विवाह उसी तरह महत्त्वहीन और नगण्य हो जाता है, जैसे सूर्य के प्रकाश के सामने चंद्रमा।" अंतर में वैराग्य का दीपक जलाए वह बढ़ चले '**आत्मनोमोक्षार्थं जगद्हिताय च**' की परम साधना की ओर।

यों श्रेयपथ पर कदम बढ़ाने वालों का उपहास और विरोध आरंभ में होता है, पर जब स्पष्ट हो जाता है कि उच्चस्तरीय लक्ष्य की दिशा में कोई चल ही पड़ा है तो उसके साथी-सहयोगी भी क्रमशः मिलते और बढ़ते चले जाते हैं। हरिबाबा के साथ यही हुआ। वह 86 वर्ष की आयु तक मानव में संव्याप्त हरि की सेवा करते हुए हरिधाम पधारे। लोकहित के सागर में स्वहित की बूँदों के विसर्जन का महत्त्व और गौरव उस समय और अधिक बढ़ जाता है, जब इक्कीसवीं सदी अगणित श्रेय-सौभाग्य की वर्षा करने के लिए घनघोर-घटाटोप की तरह उमड़ती-घुमड़ती दिखाई दे रही है। ❐

सूचना

सभी भाईयों/बहनों से निवेदन है कि पत्र व्यवहार में, ईमेल व व्हाट्सएप भेजने में अपने मोबाइल नंबर, व्हाट्सएप नंबर, ईमेल, पिनकोड का उल्लेख अवश्य करें ताकि समय से सूचना का आदान-प्रदान हो सके।

गायत्री-मंत्र गायन के अनेक लाभ

गायत्री मंत्र एक विज्ञानसम्मत गाया जाने वाला मंत्र है। भौतिक सुख-शांति की अभिवृद्धि, वातावरण संशोधन एवं सूक्ष्म चेतना को बलवती बनाने के लिए उसका प्रयोग प्राचीनकाल के ऋषियुग से होता रहा है। मंत्र को व्यापक बनाने के लिए उसके साथ ताप और प्रकाश को यज्ञ के रूप में जोड़ना पड़ता है, तभी वह अधिक शक्तिशाली और विश्वव्यापी बनता है।

यज्ञ एक बहुमुखी प्रक्रिया है। देखा गया है कि वनौषधियों को वायुभूत करके, हवन करके, उसके समीप बैठने से गायत्री मंत्र का मध्यम स्वर से उच्चारण करते हुए यदि यज्ञ कार्य पूरा किया जाए तो पर्यावरण संशोधन से लेकर शारीरिक व मानसिक रोग-निवारण व स्वास्थ्य-संरक्षण तक में उसकी महती भूमिका संपन्न होती देखी जाती है।

जिन्हें कुछ अधिक सार्थक उपलब्धि करनी हो अथवा जो इससे अधिक करने की स्थिति में हैं, उन्हें गायत्री मंत्र के ध्वनि गायन का अवलंबन लेना चाहिए। जिस प्रकार शाकल्य में प्रयुक्त होने वाली वनौषधियों के अपने-अपने पृथक-पृथक गुण हैं, उसी प्रकार गायत्री मंत्र को जिन ध्वनियों में गायन करते हुए आहुतियाँ दी जाती हैं, उनका भी विशेष प्रभाव होता है। मंत्र की विशेषता उसके विशिष्ट रूप से किए गए गायन में है। उनमें शक्ति इसी आधार पर पैदा होती है। सामगान का समूचा शास्त्र ही इसी आधार पर बना है। मध्यम स्वर में तो किसी मंत्र का जप हो ही सकता है, दैनिक या सार्वजनिक यज्ञ में भी यह यज्ञ-स्वर काम दे सकता है। वैज्ञानिक प्रयोजनों के लिए इस प्रकार की स्वर-लहरियों का विशेष प्रभाव देखा गया है। संसार भर में संगीत के प्रभाव से फसलें अच्छी फलित करने, अंडे देने वाले पक्षियों एवं मछलियों को परिपुष्ट बनाने के प्रयोग हुए हैं।

अथर्ववेद के अनुसार इससे जहाँ अनेक रोगों से छुटकारा पाया जाता है और दीर्घजीवन की उपलब्धि होती है, वहीं समिधाओं तथा औषधियों से परिपूरित यज्ञाग्नि के प्रभाव से उन्मादी और सनकी व्यक्ति भी रोगमुक्त हो जाते हैं। श्रुति कहती है—**''गयान् प्राणान् त्रायते सा गायत्री।''** जो प्राणों की रक्षा करती है वह गायत्री है।

परीक्षणोपरांत पाया गया है कि मानसिक रोगों के निवारण के लिए उस प्रयोजन में काम आने वाली वनौषधियों का हवन अधिक लाभदायक सिद्ध होता है। शारीरिक रोगों में मध्यम स्वर से गायत्री मंत्र का उच्चारण करते हुए हवन किया जाता है, किंतु मानसिक रोगों के लिए सस्वर पाठ करते हुए हवन करना चाहिए। इसके लिए अभ्यास करना पड़ता है। यह एक प्रकार का संगीत है। संगीत का 'न्यूरोहारमोनों' पर प्रभाव पड़ता है और उससे मनोविकार दूर होते हैं। अकेले की अपेक्षा सामूहिक रूप से किया गया सस्वर मंत्रोच्चार अधिक प्रभावशाली होता है और प्रतिफल भी जल्दी प्रस्तुत करता है। इस प्रयोजन के लिए पहले से टेप किए हुए सस्वर मंत्रोच्चार के कैसेटों से अभ्यास किया जा सकता है। ❐

परद्रव्येषु लोष्टवत्

आँख मलते हुए उसने पलकें झपकाईं। उसके चेहरे पर अभी भी भय और आश्चर्यमिश्रित भाव थे। वह हड़बड़ाकर उठा और लगभग दौड़ते हुए बुढ़िया की चारपाई तक पहुँचा। बस, पहुँचकर वह सहम गया, बुढ़िया की बेजान आँखें उसे घूर रही थीं। वह अब इस दुनिया में नहीं थी। बरसों का साथ एकाएक छूट जाने पर उसकी आँखें बरस पड़ीं।

रात समाप्त होने को थी। उसने चारों ओर देखा, उसके जेहन पर अभी भी सपने का असर था। सपने का एक हिस्सा सच होने की वजह से वह सोचने के लिए विवश था, क्या दूसरा हिस्सा भी सच होगा। बुढ़िया की लाश दफनाने की फिक्र भी। इसलिए पादरी के पास गया। पादरी ने जब बूढ़े का दुःख सुना तो पहले चुप रहा, फिर बोला—"तुम्हारे पास रुपये हैं?"

"मैं गरीब हूँ फादर।" हाथ जोड़कर लगभग गिड़गिड़ाते हुए उसने वाक्य पूरा किया—"मेरे पास इस समय एक भी पैसा नहीं है।"

"मुझे अभी फुरसत नहीं है, तुम चले जाओ।" इतना कहकर पादरी ने दरवाजे बंद कर लिए। बेचारे बूढ़े ने कब्रिस्तान का रास्ता पकड़ा और कुदाल से स्वयं कब्र खोदने में जुट गया।

अचानक बूढ़े की कुदाल एक घड़े से टकराई। बूढ़ा चक्कर में आ गया। उसे ऐसा लगा जैसे घड़े से उठने वाली टन्न की आवाज घड़े से न उठकर उसके मस्तिष्क से उठी हो। उसने मिट्टी हटाई। देखा तो सोने की अशरफियों से भरा घड़ा रखा है। वह खुशी से फूला न समाया। उसने सोचा कि अब उसकी बुढ़िया बहुत अच्छे ढंग से दफना दी जाएगी। वह पादरी और रिश्तेदारों को दावत भी दे सकेगा।

बस, उसने झटपट उस घड़े को उठाया और घर लौट गया। जेब में दस अशरफियाँ डाल लीं, बाकी छिपाकर रख दीं। उसके देखे गए स्वप्न का दूसरा अंश भी सही था।

वह फिर से पादरी के पास गया। पादरी तो पहले उसे देखकर झल्लाया, लेकिन उसके हाथ में अशरफियों की चमक देखकर उसकी आवाज कोमल हो गई। वह तुरंत उस बूढ़े के साथ जाने के लिए तैयार हो गया। सोचा, इतना धन तो बड़े-बड़े धनवानों को दफनाने पर भी नहीं मिलता।

बुढ़िया को दफनाए जाने के बाद, बूढ़े ने सभी को दावत दी। भोजन करते समय पादरी सोच रहा था कि इस बूढ़े के पास इतना धन आया कहाँ से?

इसलिए जैसे ही सब भोजन करके चले गए, उसने उस बूढ़े को अकेले में बुलाकर पूछा—"तुम्हारे पास अचानक इतना धन आया कहाँ से? यदि तुमने सारी बातें सच-सच नहीं बताईं तो मैं तुम्हें पुलिस के हवाले कर दूँगा।" इस धमकी से बूढ़ा घबरा गया। उसने अशरफियों से भरा घड़ा मिलने की बात सच-सच बता दी।

पादरी के मन में चैन न था। वह बूढ़े के स्वप्न के अंतिम हिस्से का लाभ उठाने की फिराक में था। आखिर उसने एक तरकीब सोची और रात होने का इंतजार करने लगा।

पादरी के पास एक बूढ़ा बकरा था। रात होते ही उसने बकरे को मार डाला, फिर उसकी खाल, सींग और दाड़ी निकाली। खाल को

ओढ़कर पत्नी से बोला कि उसे सुई-डोरे से सिल दे। इसके बाद बकरे के सींग अपने सिर पर लगाए। उसकी दाढ़ी के बाल अपनी दाढ़ी में लगाए।

अब यह भयानक शैतान की शक्ल का दीख रहा था। अपनी शक्ल की भयानकता से संतुष्ट होकर वह बूढ़े के घर जा पहुँचा। दरवाजा खटखटाते ही पादरी की तरकीब से अनजान बूढ़े ने किवाड़ खोल दिए। उसके होश-हवास गुम हो गए। उसने बड़ी हिम्मत करके पूछा—''तुम कौन हो?''

'शैतान'—पादरी ने अपनी आवाज खौफनाक बनाते हुए कहा—''तुम मेरा धन लाए हो। मैंने तुम्हारी गरीबी पर दया की थी। सारा धन इसलिए दिखाया था कि आवश्यकतानुसार तुम ले सको, पर तुम ठहरे लालची, तुमने सारा-का-सारा हड़प कर लिया। अब तुम्हारा काम हो गया, मेरा धन वापस कर दो।''

बूढ़े की आँखों के सामने अपना बीता हुआ सपना नाच गया। जिसमें उसने एक देवदूत को देखा था, जो उसे बता रहा था—''तुम्हारी बुढ़िया का समय समाप्त हो गया, मैं उसे लेने आया हूँ। इसे जब तुम दफनाने जाओगे तो तुम्हें सोने की अशरफियों से भरा घड़ा मिलेगा, पर तुम इसे मत लेना, क्योंकि जो धन बिना मेहनत किए मिलता है, वह शैतान का होता है।''

बूढ़े ने काँपते हाथों से सोने से भरा घड़ा उठाया और पादरी को थमा दिया। उसे देवदूत की चेतावनी सच्ची लगी।

पादरी इतना धन पाकर बहुत खुश हुआ। वह घर आकर पत्नी से बोला कि उसकी खाल के टाँके काट दे। पत्नी ने जैसे ही चाकू चलाया तो पादरी चिल्ला पड़ा, क्योंकि अब तक खाल शरीर से चिपक चुकी थी। जिस जगह से काटा गया था, वहाँ से खून बहने लगा था।

दोनों बड़े हैरानी में पड़ गए। उन्होंने खाल निकालने की बहुत कोशिश की, पर सफल न हुए। मजबूरन पादरी को उसी शक्ल में रहना पड़ा। गाँव में सभी को यह बात मालूम हो गई। पादरी ने बूढ़े को धन वापस करना चाहा, परंतु उसने शैतान का धन कहकर वापस लेने से इनकार कर दिया। पादरी को भी अब यह बात समझ में आ गई थी कि बिना मेहनत किए मिलने वाला धन शैतान का होता है। उसे अपनी करनी पर पछतावा हो रहा था, गाँव के लोग भी उसे बुरा-भला कह रहे थे। ❐

युधिष्ठिर को स्वर्ग ले जाते समय नरक दिखाया गया था। उसमें सबसे भीषण स्थल को देखकर वे सिहर उठे। पूछने पर पता लगा कि यहाँ वे जीव भेजे जाते हैं, जिन्होंने स्वार्थवश स्वयं पतन का रास्ता पकड़ा तथा अहंकारवश अपने प्रभाव से अनेक को पतन के लिए प्रेरित किया। दूतों ने बतलाया कि यातना के बाद उन्हें नया जन्म जब मिलता है, तो पीड़ित बनाकर भेजा जाता है, ताकि वे समझ सकें कि पीड़ा किसे कहते हैं।

बाल दिवस पर विशेष

बच्चे सभ्य, शालीन, सेवाभावी बनें

दस वर्ष की आयु तक के बच्चे प्रायः अपने घर-परिवारवालों से ही लिपटे रहते हैं। उसी परिधि में खेलते, कूदते, बोलते, व्यवहार करते हैं।

प्रायः पाँच वर्ष से स्कूली पढ़ाई आरंभ हो जाती है। इसके साथ ही वे अपनी कक्षा के कुछ को मित्र, घनिष्ठ बना लेते हैं और उनके साथ भी मैत्रीपरक व्यवहार करने लगते हैं। जिन्हें पाँच वर्ष से कम आयु में नर्सरी स्कूलों में भरती होने का अवसर मिल जाता है, उन्हें वहाँ भी ज्ञानवर्द्धक कार्यों में समय बिताने का मनोरंजक अवसर मिल जाता है। इस प्रकार दस वर्ष की आयु अभिभावकों, अध्यापकों के सहकार पर अवलंबित रहती है। कुछ अपवादों को छोड़कर प्रायः ऐसा ही देखने में आया है। इसके उपरांत धीरे-धीरे उनके स्वतंत्र व्यक्तित्व का विकास होने लगता है। निज की इच्छाएँ भी जगने लगती हैं और वातावरण के अनुरूप अनुकरण के आधार पर आदतें भी पकने लगती हैं। यही है वह अवसर जिसे पौधे का पल्लवित होना कह सकते हैं। इससे पहले की आयु एवं स्थिति का अंकुर उगने के समतुल्य समझा जा सकता है।

अंकुर के पल्लवित होने की आयु शैशव कहलाती है। जन्म से दो-तीन वर्ष तक के बच्चे तो अपने शरीर की आवश्यकताएँ पूरी कराने के फेर में ही रहते हैं; उनकी इच्छा, आवश्यकता तो प्रकट होती हैं, पर न तो स्वतंत्र व्यक्तित्वों का विकास होता है और न उचित-अनुचित का बोध। वे अपना हित-अनहित भी नहीं समझते। अभिभावक जहाँ उन्हें दुलार देते हैं, वहाँ इस बात का भी ध्यान रखते हैं कि उनका सहज उत्साह विपत्ति का कारण न बने। सजाने, सँभालने, दुलारने के अतिरिक्त उनकी हर बात का भी ध्यान रखा जाता है।

आयु बढ़ने के साथ जीवनक्रम में नया मोड़ आता है। दस से बीस वर्ष तक की आयु ऐसी है, जिसमें नए रक्त का उफान अधिक रहने के कारण जोश बहुत रहता है, पर अनुभव के अभाव में अपनी शारीरिक, मानसिक शक्तियों का कब, क्या, किस प्रकार उपयोग किया जाए; इसका सुनियोजन करना उन्हें नहीं आता। संपर्क में जो व्यक्ति आता है, जैसी घटनाएँ घटित होती दीखती हैं, जिस स्तर के वातावरण में रहना पड़ता है, उसका चमकीला पक्ष उन्हें आकर्षित कर लेता है।

इन दिनों बहुसंख्यक लोग विकृत चरित्र-चिंतन वाले होते हैं। उनकी आदतें, क्रियाएँ भी ऐसी होती हैं; जिन्हें शालीन, सज्जनोचित नहीं कहा जा सकता है। किशोरों में कई आबारागरदी के अभ्यस्त होते हैं। वे शिक्षा में, स्वास्थ्य-संवर्द्धन में, गृह-कार्यों में हाथ बँटाने में अपना समय न लगाकर ऐसे कृत्यों में रुचि लेते हैं, जिनमें अनौचित्य का आकर्षक पक्ष उभरा रहता है। उनके जैसे साथियों की मंडली बन जाती है। उनका प्रयास यह भी रहता है कि भोले किंतु उत्साही लड़कों से दोस्ती गाँठें, उन्हें साथी बनाएँ और घर से पैसे चुरा लाने की सलाह देने से लेकर अपने साथ दुर्व्यसनों में सम्मिलित करते हैं।

अभिभावक उन पर पूरा ध्यान दे नहीं पाते। उन्हें इसके लिए समय का अभाव ही रहता है, फिर यह भी सोचते हैं कि बच्चा समझदार हो गया तो अपना भला-बुरा भी सोचता होगा। दुलार के कारण अविश्वास भी करते नहीं बन पड़ता। चुपके-चुपके उन्हें कुसंग का घुन खोखला करता रहता है। पता तब चलता है, जब शिकायतों के ढेर सामने आ खड़े होते हैं। उनके स्वभाव में बोए हुए कुसंस्कार बढ़कर विषवृक्ष के रूप में फलित होते हैं।

किशोरों में उच्छृंखलता भी पाई जाती है। वे अपनी इच्छा, रुचि एवं आदत कार्यपद्धति को ही सब कुछ मानते हैं। समझाने, रोकने पर अपमान समझते और प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाकर विग्रह खड़ा करते हैं। इसी कहने-सुनने में कई बार तो घर से भाग जाने, पढ़ाई छोड़ बैठने जैसे विनाशकारी कदम उठा लेते हैं। उनके लिए समूचे परिवार को कष्ट होता है। बदनामी का कारण बनना पड़ता है तथा आर्थिक दृष्टि से हानि उठानी पड़ती है।

सभी किशोर तो ऐसे कुचक्र में नहीं फँसते, पर संभावना हर किसी के शिकार हो जाने की रहती है। उनके दोस्त ही प्रकारांतर से दुश्मन बन जाते हैं और भविष्य बिगाड़ने के निमित्त कारण बनते हैं।

बालनिर्माण के लिए क्या करें?

अच्छा हो कि सभी अभिभावक, अध्यापक, संरक्षक इस संदर्भ में सतर्क रहें। उनकी निगरानी रखें और रोक-टोक करते रहने की अपेक्षा यह अच्छा है कि इस आयु में खाली रहने वाले समय और कुछ करने के उत्साह को उपयुक्त दिशा दी जाए। उन्हें ऐसे कामों में लगने का अवसर दिया जाए, जो सद्गुणों को विकसित करते हों, सत्प्रवृत्तियाँ उभारते हों, इससे उनका उत्साह, श्रम एवं समय ऐसे कार्यों में लग सके, जो संतोष एवं श्रेय प्रदान करें। सभ्य, शालीन, सेवाभाव बनाने के लिए स्थानीय किशोर समुदाय के बालचर, स्काउट, सेवादल जैसे संगठन बनने चाहिए और उनमें आयु विभाजन के हिसाब से वर्ग बनने चाहिए, ताकि उनकी क्षमता के अनुरूप बहुत कुछ ऐसा सीखने को मिलता रहे, जो उनकी निजी प्रगति में सहायक हो और सेवा भावना को भी विकसित करे। समाजसेवा के कार्यों में रुचि लेने लगने पर चिंतन को दिशा मिलती है। चरित्र में सद्गुणों की स्थापना होती है। इसके अतिरिक्त मनोरंजन के लिए भी काफी अवसर मिलता है। खेल-कूदों से स्वास्थ्य सुदृढ़ होता है। 'कैंप फायर' जैसे आयोजनों से व्यावहारिक ज्ञान तथा कौशल निखरता है।

एक समय था जब स्काउटिंग स्कूलों में ऐच्छिक विषय होते हुए भी अध्यापकों एवं अभिभावकों के समर्थन से अनिवार्य जैसा बन गया था। उपयोगिता की दृष्टि से ये स्थापनाएँ अभी भी उतनी ही उपयोगी हैं। इनसे किशोरावस्था को खतरों से बचाकर प्रगति-पथ पर अग्रसर करने में भारी सहायता मिल सकती है। बालकों के व्यक्तित्व निर्माण का ध्यान हर माता-पिता को रखना चाहिए। समय निकालकर उनके साथ खेल, सामान्य ज्ञान उपयोगी जानकारियाँ, स्वास्थ्य एवं सुसंस्कारों के लिए उपयुक्त वातावरण बनाने में समुचित प्रयत्न-पुरुषार्थ करना चाहिए। उनके व्यक्तित्व में जहाँ कहीं कमी दिखे उसे हटाने तथा श्रेष्ठताओं को जोड़ने का सुयोग बनाते रहना चाहिए। ❐

अमूल्य है-वाणी का दान

मनुष्य में एकदूसरे के साथ आदान-प्रदान की परंपरा प्रवाहित करने के लिए सबसे प्रमुख माध्यम है—वाणी। धन का आदान-प्रदान तो किसी विशेष अवसर पर विशेष कारण से ही होता है। शरीर सेवा का क्षेत्र भी सीमित है। श्रम-सहयोग के अवसर तो कभी-कभी किसी-किसी के साथ ही आते हैं, पर वाणी की विशेषता ऐसी है कि उसके द्वारा रास्ता चलते सहज भाव से कुछ कहने-सुनने का सिलसिला चल सकता है। पदार्थपरक आदान-प्रदान की स्थिति आने से पूर्व हर किसी का उपक्रम वार्त्तालाप से ही आरंभ करना पड़ता है। यह मनोरंजन के लिए, जिज्ञासा पूर्ति के लिए, निस्तब्धता तोड़ने के लिए सहज भाव से भी होता रह सकता है। यदा-कदा ऐसे अवसर भी आते हैं, जिनमें महत्त्वपूर्ण मंत्रणा भी करनी पड़ती है और वे गोपनीय भी होती हैं; तब उसमें अधिक तन्मयता और दूरदर्शिता का समावेश रहता है। पर सदा वैसा ही नहीं होता। आमतौर से सहज वार्त्तालाप स्वजनों, मित्रों, साथी, सहयोगियों, परिवार वालों के साथ चलता ही रहता है। चलना भी चाहिए, अन्यथा चुप रहने वालों को अहंकारी या मूर्ख समझा जाने लगता है। मौनव्रतधारी योगी, महात्माओं की बात दूसरी है।

वाणी यद्यपि मुँह से निकलती एवं कानों से सुनी जाती है और मस्तिष्क को एक जानकारी देती है, किंतु यह साधारण बात हुई। इसके साथ एक परोक्षरूप से रहने वाली क्षमता है, जो बताती है कि बोलने वाले का यह जानकारी इस एक ही परीक्षण से मिल जाती है कि उसकी वाणी के साथ जुड़े हुए तत्त्व और तथ्य क्या प्रकट करते हैं ? यह हो सकता है कि कोई चुगंल-चाटुकार, ठग अथवा जाल में फँसाने वाला मीठी-मीठी बातें करे, अपनी सज्जनता बखारने और स्वयं को दूसरे का हितचिंतक सिद्ध कर दे, पर ये सभी बातें तनिक-सी गंभीरता अपनाने पर सहज ही प्रकट हो जाती हैं और विवेकवान उस प्रपंच से सहज ही बच जाते हैं, मात्र उथले चिंतन वाले सहज विश्वासी ही प्रपंच में फँसते और उथली भावुकता के प्रवाह में धोखा खाते हैं। अस्वाभाविकता अतिवादी होती है। उसमें बिना जाँच-पड़ताल किए किसी पर विश्वास कर बैठने की दुर्बलता रहती है। इसी कमजोरी को देखकर चाटुकार अपना जाल बिछाते और चिड़ियाँ फँसाते रहते हैं, किंतु जो कार्य-कारण की संगति बिठा सकते हैं, अहैतुकी अतिशय वाणी मिठास समझकर समय रहते जागरूक हो उठते हैं, उन्हें ठगे जाने की शिकायत आमतौर से नहीं करनी पड़ती।

जब धूर्तों की कपट-प्रक्रिया वाणी की मिठास से सफल हो जाती है तो कोई कारण नहीं कि भावना, आस्था और निष्ठा के साथ घुली हुई वाणी अपना स्थिर एवं उपयोगी प्रभाव न दिखा सके। यह ठीक है कि कठोर चट्टानों पर अनवरत वर्षा का तनिक भी प्रभाव नहीं पड़ता। पूरी बरसात गुजर जाने पर भी एक पत्ता नहीं उगता, पर साथ ही यह भी ठीक है कि

वर्षा के दिनों जल-संपदा जमा होती और हरीतिमा लहलहाती सरलतापूर्वक देखी जा सकती है।

वाणी में अपनी शक्ति है, उसका उपयोग करके प्रवक्ता अपना उल्लू सीधा करते रहते हैं, फिर कोई कारण नहीं कि सद्भावनायुक्त व्यक्ति सत्प्रयोजन के लिए उसका कारगर प्रयोग न कर सके। यदि किसी को उपहार-अनुदान नहीं दिए जा सकते तो कम-से-कम इतना तो हो ही सकता है कि वाणी से संपर्क में आने वालों को सांत्वना दे सकें, उत्साह बढ़ा सकें, प्रशंसा करके आत्मविश्वास जगा सकें और ऐसे परामर्श दे सकें, जिससे उनका भटकाव दूर होता है और सन्मार्ग पर चल पड़ने का आधार बनता है।

वाणी के व्यवसायी अपने-अपने प्रयोजन अपने-अपने ढंग से पूरे करते हैं। प्रवचनकर्त्ता कथावाचक, भाषणकर्मी, गायक प्रायः समुदाय को एकत्रित करके अपनी-अपनी मान्यता एवं इच्छा के अनुरूप भाषण करते रहते हैं। कई ऐसे भी हैं, जो किसी हद तक कितनों को ही प्रभावित भी करते हैं और लाभ उठाते हैं। इसे वाणी का चमत्कार कह सकते हैं। चुनावों के समय ऐसी वाचालता की धूम रहती है। दलाल, बीमा एजेंट, सेल्समैन अपनी वाक् चतुरता के आधार पर ही अच्छी-खासी कमाई करते हैं। वकील और लैक्चरर इसी माध्यम से अपनी रोजी-रोटी चलाते हैं। विदूषक, अभिनेता भी इसी कला में प्रवीण होते हैं। गायकों के पास तो वाणी ही सबसे बड़ी संपदा है। वे उसी के आधार पर लोगों का मन मोहते और अपनी छाप-छोड़ते हैं। दूसरों को प्रभावित करने और वापस उसकी उपयोगी प्रतिक्रिया लौटाने की जैसी सरल और बिना खरच की क्षमता वाणी में है, वैसी किसी और में नहीं है।

कटुवचन दूसरों को चोट पहुँचाते हैं। उन्हें आहत और रुष्ट करते हैं। अपमान किसी से सहन नहीं होता। प्रतिशोध लेना तत्काल संभव न हो तो भी उस आघात को घाव की तरह मन में दबाए रहते हैं और अवसर मिलने पर बदला चुकाते हैं। निंदा-चुगली आदि का भी ऐसा ही बुरा प्रभाव होता है। अपना अहंकार और दूसरों का अपमान मिलकर वाणी को विषैली बना देते हैं। ऐसी वाणी दूसरों पर बुरा प्रभाव छोड़ती है और उलटकर अपने लिए अहितकर परिणाम लेकर लौटती है। इस प्रकार के प्रयोग आएदिन देखने को मिलते हैं। कौए और कोयल की वाणी का अंतर लोकोक्ति बन चुका है। यह वाणी अंतरंग व्यक्तित्व का प्रत्यक्ष रूप है। संत और दुष्ट के वचन सुनकर उनका स्तर सहज ही जाना जा सकता है।

वाणी की मधुरता जहाँ अपने को संतोष, आनंद आदि देती है, वहाँ साथी-सहयोगियों, स्वजनों, परिजनों के आनंद तथा उल्लास में वृद्धि करती है। मधुरभाषी सभी को प्रिय लगते हैं। उनकी निकटता सभी चाहते हैं। आदान-प्रदान, संपर्क-व्यवहार में प्रसन्नता अनुभव करते हैं। वाणी की मधुरता का अमृत ऐसा है, जो बिना खरच किए अर्जित किया जाता है और वितरित करने पर अपने को तथा अनेकों को धन्य बनाता है।

दान-प्रक्रिया में क्या वाणी का उपयोग हो सकता है ? इसका उत्तर उत्साहवर्द्धक, सहमति में ही दिया जा सकता है। संस्कृत में एक शब्द है—'वाग्दान'। जिसका अर्थ होता है, अपनी ओर से वचन देना। प्रायः विवाह संबंधों में उभयपक्ष की स्वीकृति के लिए इसे प्रयुक्त किया जाता है। अन्य प्रकार के पारिवारिक अनुबंध में भी **'वाग्दान'** शब्द प्रयुक्त होता है। एक कदम और भी आगे बढ़ाकर देखा जाए

और इस संदर्भ में अधिक विचार किया जाए तो प्रतीत होगा कि वाणी के माध्यम से सर्वतोमुखी उत्कर्ष हेतु जितना ठोस अनुदान दिया जा सकता है, उतना अन्य किसी प्रकार नहीं। यों अपने को सर्वांगपूर्ण और सर्वोपरि मानने वाले किसी को भी कुछ भी आदेश परामर्श देते रहते हैं। उसमें अहंकार की अनधिकार की गंध देखकर प्रायः लोग इस कान से उस कान में निकाल देते हैं। कई बार तो उपहास भी उड़ाते हैं, किंतु ऐसा सज्जनों के सौम्य अनुरोध या विचार-विनिमय के संदर्भ में नहीं होता।

भाषा में रचे हुए शब्द-जंजाल भी अपने पीछे रहने वाले कपटभाव को बिना प्रकट किए नहीं रहते। इसलिए जिन्हें **वाग्दान** देकर दूसरों का हितसाधन करना है, उन्हें सर्वप्रथम अपने व्यक्तित्व और वाणी को प्रामाणिक बनाना चाहिए। स्वार्थपरता और अहंता की दुष्प्रवृत्ति को चिंतन और व्यवहार में से पूरी तरह छोड़ना चाहिए। इतना बन पड़े तो समझना चाहिए कि वार्त्तालाप में सद्भाव और सदाशयता का सहज समावेश रहने लगेगा। जो कहा जाए, उससे सुनने वाले का वास्तविक हितसाधन दृष्टिगोचर होगा। इसका प्रभाव सुनने वाले पर पड़े बिना न रहेगा। वाणी निरर्थक तभी होती है, जब कहने वाले की दुरभिसंधि कुटिलता के रूप में उसके पीछे काम करती है। यह विष घुला होने पर अविश्वास, संदेह और छद्म जुड़ा रहने से सुनने वाले का अंतराल चौकन्ना हो जाता है और परामर्श को मानने के बजाय उपेक्षा भाव भी आरंभ कर देता है। ऐसी वाणी निरर्थक होती है और प्रतिकूल प्रभाव छोड़ती देखी गई है।

अपनी नम्रता, दूसरों का सम्मान, आत्मीयता का पुट, इन तीनों का सम्मिश्रण रहने पर वाणी में मिठास आता और प्रभाव बढ़ता है। ऐसी परिष्कृत वाणी से बोले गए शब्द यदि सिद्धांतों और आदर्शों पर अवलंबित हैं तो उनका प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। इसके लिए आवश्यक व्यवस्था बन सके तो विचारगोष्ठियाँ, सभा-आयोजनों का भी प्रबंध किया जा सकता है और उपस्थित जनसमुदाय की आवश्यकता एवं परिस्थिति के अनुसार परामर्श-उद्बोधन दिया जा सकता है। उपयोगी, सारगर्भित और सामयिक मार्गदर्शन करने वाली शिक्षा सदा प्रभावशाली सिद्ध होती है। उससे भटकाव दूर होते हैं और ऐसा राजमार्ग हस्तगत होता है, जिस पर चलते हुए सुलझी स्थिति तक पहुँचा जा सके, कठिनाइयों के जाल-जंजाल से जनमानस को उबारा जा सके। ❐

एक शिकारी तीर-कमान लेकर शिकार करने निकला। एक छोटा खरगोश भर पकड़ सका। वह अपने गाँव का रास्ता भूल गया। सो उसने पेड़ के नीचे बैठकर चिड़ियाँ चुगा रहे लड़के से पूछा—"क्या तुम मेरे गाँव का रास्ता बता सकते हो?"

लड़के ने कहा—"मैंने दो ही रास्ते सुने हैं—एक दोजख का, जो तुम्हारे जैसे बेरहम लोगों को बिना किसी से पूछे मिल जाता है। दूसरा मेरी तरह नेकी करने का, जो जन्नत की ओर जाता है। तुम्हें जिस पर जाना हो, बिना पूछे चले जाओ।"

शिकारी के मन में बात चुभ गई। उसने खरगोश को छोड़ दिया और फिर कभी शिकार न करने की कसम खाई।

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते....

नारी पुरुष की पूरक सत्ता है। वह मनुष्य की सबसे बड़ी ताकत है, उसके बिना पुरुष का जीवन अपूर्ण है। नारी ही उसे पूर्ण करती है। मनुष्य का जीवन अंधकारयुक्त होता है तो स्त्री उसमें रोशनी पैदा करती है।

पुरुष और नारी एक ही सत्ता के दो रूप हैं और परस्पर एकदूसरे के पूरक हैं। फिर भी कर्त्तव्य, उत्तरदायित्व और त्याग के कारण पुरुष से नारी कहीं महान है। वह जीवनयात्रा में पुरुष के साथ ही नहीं चलती, वरन उसे समय पड़ने पर शक्ति और प्रेरणा भी देती है। उसकी जीवनयात्रा को सरस, सुखद, स्निग्ध और आनंदपूर्ण बनाती है। नारी पुरुष की शक्तियों के लिए उर्वरक खाद का काम करती है। महादेवी वर्मा ने नारी की महानता के बारे में लिखा है—

''नारी केवल मांसपिंड की संज्ञा नहीं है, आदिम काल से आज विकास-पथ पर पुरुष का साथ देकर, उसकी यात्रा को सफल बनाकर, उसके अभिशापों को स्वयं झेलकर और अपने वरदानों से जीवन में अक्षय शक्ति भरकर मानवी ने जिस व्यक्तित्व चेतना का विकास किया है, उसी का पर्याय नारी है।''

इसमें कोई संदेह नहीं कि नारी धरा पर स्वर्गीय ज्योति की साकार प्रतिमा है। उसकी वाणी जीवन के लिए अमृत-स्त्रोत है। उसके नेत्रों में करुणा, सरलता और आनंद के दर्शन होते हैं। उसके हास्य में संसार की समस्त निराशा और कड़ुवाहट मिटाने की अपूर्व क्षमता है; नारी संतप्त हृदय के लिए शीतल छाया है; वह स्नेह और सौजन्य की साकार देवी है। आचार्य चतुरसेन शास्त्री के शब्दों में—''नारी पुरुष की शक्ति के लिए जीवन-सुधा है। त्याग उसका धर्म, सहनशीलता उसका व्रत और प्रेम उसका जीवन है।''

कवींद्र-रवींद्र ने नारी के हास में जीवन निर्झर का संगीत सुना है। जयंशकर प्रसाद ने कहा है—

नारी तुम केवल श्रद्धा हो,
विश्वास रजत नग-पग तल में।
पीयूष स्त्रोत-सी बहा करो,
जीवन के सुंदर समतल में॥

संसार के सभी महापुरुषों ने नारी में उसके दिव्य स्वरूप के दर्शन किए हैं, जिससे वह पुरुष के लिए पूरक सत्ता की ही नहीं, वरन उर्वरक भूमि के रूप में उसकी उन्नति, प्रगति एवं कल्याण का साधन बनती है। स्वयं प्रकृति ही नारी के रूप में सृष्टि के निर्माण, पालन-पोषण व संवर्द्धन का काम कर रही है। नारी के हाथ बनाने के लिए ही हैं, बिगाड़ने के लिए नहीं। परिस्थितिवश, स्वभाववश नारी कितनी ही कठोर बन जाए, किंतु उसकी वह सहज कोमलता कभी ओझल नहीं हो सकती, जिसके पावन अंक में संसार को जीवन मिलता है। प्रेमचंद के शब्दों में, ''नारी पृथ्वी की भाँति धैर्यवान, शांत और सहिष्णु होती है।''

नारी की प्रकट कोमलता, सहिष्णुता को पुरुष ने कई बार उसकी निर्बलता का चिह्न मान लिया है और इसलिए उसे अबला कहा है। किंतु वह यह नहीं जानता कि कोमलता, सहिष्णुता के अंक में ही मानव जीवन की स्थिति संभव है। क्या माँ के सिवाय संसार में ऐसी कोई हस्ती है, जो शिशु की सेवा, उसका

पालन-पोषण कर सके। संसार में जहाँ-जहाँ भी चेतना साकार रूप में मुखरित हुई है, उसका एकमात्र श्रेय नारी को ही है। इसमें कोई संदेह नहीं कि नारी निर्मात्री शक्ति है। वह समाज का धारण, पोषण और संवर्द्धन करती है।

नारी अपने विभिन्न रूपों में सदैव मानव जाति के लिए त्याग, बलिदान, स्नेह, श्रद्धा, धैर्य, सहिष्णुता का जीवन बिताती है। माता-पिता के लिए आत्मीयता, सेवा की भावना जितनी पुत्री में है, वैसी अन्यत्र नहीं होती। पराये घर जाकर भी पुत्री अपने माँ-बाप से जुदा नहीं हो सकती। उसमें परायापन नहीं आता, उसके हृदय में वही सम्मान-सेवा की भावना भरी रहती है, जैसी बचपन में थी। भाई-बहन का नाता कितना आदर्श, कितना पुण्य-पवित्र है। भाई-भाई परस्पर जुदा हो सकते हैं, एकदूसरे का अहित कर सकते हैं, किंतु भाई-बहन जीवनपर्यंत कभी विलग नहीं हो सकते। बहन जहाँ भी रहेगी अपने भाई के लिए शुभकामनाएँ, उसके भले के लिए प्रयत्न करती रहेगी। माँ-तो-माँ ही है। पुत्र की हितचिंता उसका भला, लाभ, हित सोचने वाला माँ के समान संसार में और कोई नहीं है। संसार के सब लोग मुँह मोड़ लें, किंतु एक माँ ही ऐसी है, जो अपने पुत्र के लिए सदा-सर्वदा सब कुछ करने के लिए तैयार रहती है।

पत्नी के रूप में नारी मनुष्य की जीवनसंगिनी ही नहीं होती, वह सब प्रकार से पुरुष का हितसाधन करती है। शास्त्रकार ने भार्या को छह प्रकार से पुरुष के लिए हितसाधक बतलाया है—

कार्येषु मन्त्री, करणेषु दासी,
भोज्येषु माता, रमणेषु रम्भा।
धर्मानुकूला, क्षमया धरित्री,
भार्या च षड्गुणवती च दुर्लभा॥

''कार्य में मंत्री के समान सलाह देने वाली, सेवादि में दासी के समान काम करने वाली, भोजन कराने में माता के समान पथ्य देने वाली, आनंदोपभोग के लिए रंभा के समान सरस, धर्म और क्षमा को धारण करने में पृथ्वी के समान क्षमाशील ऐसे छह गुणों से युक्त स्त्री सचमुच इस विश्व का एक दुर्लभ रत्न है।''

राम के जीवन से सीता को निकाल देने से रामायण में कुछ नहीं रहता। द्रौपदी, कुंती, गांधारी आदि का चरित्र निकाल देने पर महाभारत की महान गाथा कुछ नहीं रहती;

मातृशक्ति का उत्थान इस समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है। भावी युग का नेतृत्व मातृशक्ति के हाथों में होगा, जो विश्व के लिए कल्याणकारी होगा। परमपूज्य गुरुदेव ने इक्कीसवीं सदी को 'नारी सदी' कहा है। अब मातृशक्ति को जीवन के हर क्षेत्र में उठना होगा, आगे बढ़ना होगा।

पांडवों का जीवन-संग्राम अपूर्ण रह जाता है। शिव के साथ पार्वती, कृष्ण के साथ राधा, राम के साथ सीता, विष्णु के साथ लक्ष्मी का नाम हटा दिया जाए तो इनके लीला, गाथा, चरित्र अधूरे रह जाते हैं।

प्राचीनकाल से नारियाँ घर-गृहस्थी को ही देखती नहीं आ रहीं; समाज, राजनीति, धर्म, कानून, न्याय सभी क्षेत्रों में वे पुरुष की संगिनी ही नहीं रहीं, वरन सहायक, प्रेरक भी

रहीं हैं। उन्हें समाज में पूजनीय स्थान दिया गया है। महाराजा मनु ने भी अपनी प्रजा से कहा था—

''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।''

जहाँ नारी की पूजा होती है, वहाँ देवता निवास करते हैं। समाज में नारी को सम्मान्य और पूज्य स्थान देकर जब इसे पुरुष का सहायक बना लिया जाता है तो ही समृद्धि, यश, वैभव बढ़ते हैं; जिससे सुख-शांति और आनंदपूर्वक जीवन बिताया जा सकता है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि नारी का सहयोग मानव जीवन में उन्नति के लिए आवश्यक है, अनिवार्य है। वह समाज उन्नति नहीं कर सकता, जहाँ स्त्री, जो मानव जीवन का अर्द्धांग ही नहीं, एक बहुत बड़ी शक्ति है, को सामाजिक अधिकारों से वंचित कर उसे लुंज-पुंज एवं पददलित बनाकर रखा जाता है।

आवश्यकता इस बात की है कि हम नारी को समाज में वही प्रतिष्ठा दें, जिसकी आज्ञा हमारे ऋषियों-मनीषियों ने दी है। उसे जीवन के सभी क्षेत्रों में आगे बढ़ाएँ। हम देखेंगे कि नारी अबला, असहाय न रहकर शक्ति-सामर्थ्य की मूर्ति बनेगी। वह जीवनयात्रा में हमारे लिए बोझ न रहकर हमारी सहायक-सहयोगिनी सिद्ध होगी। तब हमें उसके भविष्य के संबंध में चिंतित न होना पड़ेगा। वह अपनी रक्षा करने तथा अपना निर्वाह करने में स्वयं समर्थ होगी। हमारे सामाजिक जीवन की यह एक बहुत महत्त्वपूर्ण माँग है कि सदियों से घर की चहारदीवारी में बंद, परदे की ओट में छिपी हुई पराश्रिता, परावलंबी, अशिक्षित, अंधविश्वासग्रस्त बनाकर रखी गई नारी को वर्तमान दुर्दशा से उबारें। उसे समानता, स्वतंत्रता की मानवोचित सुविधा प्रदान करें। उसे शिक्षित, स्वावलंबी, सुसंस्कृत एवं योग्य बनाएँ, तभी वह हमारे विकास में सहायक बन सकेगी तथा तभी विश्व मानव का समग्र उत्कर्ष हो सकेगा। ❐

सरिता के सुरम्य तट पर सुशोभति शिव मंदिर, पास ही घाट पर धोबियों के पत्थर पड़े थे। मंदिर में प्रतिष्ठित शिवलिंग और धोबी का एक पत्थर दोनों कभी एक पर्वत के ही अंग थे। काल गति ने एक को शिव प्रतिमा बना दिया, तो दूसरे को धोबी का पत्थर। धोबी का पत्थर आत्महीनता अनुभव कर दुःखी होता। उससे एक दिन रहा नहीं गया, शिवलिंग को संबोधित कर कहा—''तात! आप धन्य हैं। देवमंदिर में प्रतिष्ठित हैं। भव-बंधनों में जकड़े प्राणी आपके पास आकर कितनी शांति, कितना संतोष अनुभव करते हैं। काश! यह पुण्य सुयोग हमें भी मिलता।'' शिवलिंग आत्मप्रशंसा सुनकर गंभीर हो उठा। बोला—''तात! आपका दुःख करना निरर्थक है; आप नहीं जानते हम तो मात्र यहाँ आने वाले लोगों को क्षणिक शांति और शीतलता प्रदान करते हैं; आप तो निर्विकार भाव से हर किसी का मैल धोते रहते हैं। आपकी साधना धन्य है। घाट का पत्थर गद्‌गद हो उठा और दोगुने उत्साह से लोगों का मैल धोने लगा।''

शिक्षाप्रद कहानियाँ

● प्रसिद्ध विद्वान चाणक्य अपनी माँ से अत्यंत प्रेम करते थे। बचपन में एक दिन, उनकी अनुपस्थिति में एक ज्योतिषी उनके घर आया। उनकी माँ ने उन्हें चाणक्य की कुंडली दिखाई। ज्योतिषी बोले—''माँ! तेरा पुत्र अत्यंत भाग्यवान है। एक दिन वह चक्रवर्ती सम्राट बनेगा। मुझ पर भरोसा न हो तो उसका आगे का दाँत देखना, उस पर नाग का निशान होगा।'' चाणक्य के लौटने पर माँ ने उस निशान की पुष्टि की तो चिंतित हो गईं। उन्हें लगा कि सम्राट बनने पर चाणक्य कहीं उन्हें भुला न बैठे। उन्हें चिंतित देख चाणक्य ने कारण पूछा तो पूरी घटना का पता चला। चाणक्य ने तुरंत अपना वह दाँत पत्थर से तोड़ डाला और उसे माँ के सामने रखते हुए बोले—''माँ! तुम्हारे सामने एक नहीं, अनेक सम्राट-पद निछावर हैं।''

● गांधी जी जब छोटे थे तो उनके बड़े भाई ने उन्हें जोर से मार दिया। वे रोते हुए माँ के पास शिकायत करने गए। माँ ने कहा—''तू भी उसे मार।''

गांधी जी माँ पर बिगड़े और कहा—''जो गलती करता है, उसे तो आप रोकती नहीं। उलटे मुझे भी वही गलती करना सिखाती हैं।''

माँ ने कहा—''बेटा! मैं तो तेरी परीक्षा ले रही थी। परिवार के सदस्यों के प्रति तेरी यह भावना बनी रहे। कल जब तू बड़ा हो तो विश्व-परिवार के लिए भी तेरी यही भावना विकसित हो, जो भी गलती करे, उसे रोकने का भाव जगे। तभी तो विश्व में सुख-शांति रह सकेगी।''

ऐसी शिक्षा की पहली पाठशाला परिवार ही है, जहाँ माँ प्रथम गुरु के रूप में बालक को शिक्षा देती है। हर माँ का यह कर्तव्य होता है कि वह अपनी संतान को सद् शिक्षा देकर उसे महानता के पथ पर चलाए।

● अंधड़ आया, उसके कारण एक विशाल वृक्ष पृथ्वी पर गिर गया। पेड़ के नीचे एक ऊँट बैठा था, उसकी कमर टूट गई। टहनियों पर लगे घोंसलों में पक्षी और अंडे-बच्चे कुचलकर चूरा हो गए। ढेरों मांस वहाँ बिखरा पड़ा था।

एक भूखा सियार उधर से निकला। वह अनायास ही इतना भोजन पाकर बहुत प्रसन्न हुआ। सोचने लगा महीनों तक पेट भरने का मसाला मिल गया। उसने संतोष की साँस ली। निश्चिंत होकर उसने नजर दौड़ाई, तो नदी तट पर एक बड़ा-सा मेंढ़क दिखा। सियार ने सोचा—पहले इसे लपक लिया जाए, नहीं तो यह डुबकी लगाकर भाग खड़ा होगा और हाथ से निकल जाएगा। सियार ने मेंढक पर झपट्टा मारा। मेंढ़क नदी में खिसक गया। सियार भी इस चिकनी मिट्टी में फिसलता चला गया और गहरे पानी में समा गया। इसे कहते हैं, लालच का फल।

जो है, उसी में संतोष करना ही बुद्धिमत्ता है। जो अधिक-और-अधिक के चक्कर में पड़ते हैं, वे प्राणों से भी हाथ धो बैठते हैं। ❐

आत्मीय अनुरोध

यह दो माह पत्रिका विस्तार के लिए लगाएँ

परमपूज्य गुरुदेव का सारा जीवन ज्ञानयज्ञ को समर्पित रहा। वे स्वयं कहते थे—"मैं व्यक्ति नहीं, विचार हूँ। जो मेरा साहित्य पढ़ता है और दूसरों को पढ़ाता है, वही मेरा शिष्य है, गायत्री और यज्ञ का उपयोग तो हम नए लोगों को मिशन से जोड़ने के लिए बाजीगर की डुगडुगी की तरह करते हैं।" अब आवश्यकता इस बात की है कि जिन विचारों से हमारे जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन आया, उन्हें दूसरों तक पहुँचाकर उनके जीवन, आचरण और व्यवहार में परिवर्तन लाने का पुण्यकार्य हमें करना ही चाहिए। युग निर्माण कैसे होगा? व्यक्ति के निर्माण से। व्यक्ति का निर्माण उसके विचार करते हैं।

परमपूज्य गुरुदेव ने सकारात्मक, उपयोगी, क्रांतिकारी विचारों को जन-जन तक पहुँचाने के लिए विचार क्रांति अभियान चलाया। युग परिवर्तन का आधार विचार-क्रांति होगी, ऐसा उनका दृढ़ विश्वास था। यह कार्य आज करें या कुछ वर्षों बाद, इसके अतिरिक्त कोई दूसरा मार्ग है ही नहीं। मिशन के हर क्रियाकलाप में हमें मिशन के उद्देश्य को ध्यान में रखना चाहिए। मिशन का लक्ष्य है—मानव में देवत्व का उदय और धरती पर स्वर्ग का अवतरण। देवता स्वर्ग में रहते हैं, ऐसी मान्यता है। यदि मानव में देवत्व जाग जाए तो धरतीवासी देवता बन जाएँगे और यह धरा ही स्वर्ग बन जाएगी। स्वर्ग पर जाने के लिए मरना न पड़ेगा। इसी जीवन में, इन्हीं आँखों से स्वर्ग का दर्शन होने लगेगा।

ऋषि-प्रणीत विचारों को हर मानव तक पहुँचाने के लिए दो मार्ग हैं—स्वाध्याय एवं सत्संग। स्वाध्याय का सबसे सशक्त माध्यम है—ऋषियों के क्रांतिकारी विचारों से ओत-प्रोत युग साहित्य को पढ़ना, आत्मसात् करना, तथा अपने आचरण और व्यवहार में उतारना।

पूज्यवर तपःपूत हैं, युगऋषि हैं। उन्होंने वेदों-पुराणों-उपनिषदों के गूढ़ विचारों को सामान्य व्यक्ति के समझने लायक भाषा में लिखकर हम सबके उपयोग हेतु प्रस्तुत किया है। उन्होंने इन रहस्यमय सूत्रों को युगानुकूल शैली में प्रस्तुत किया। ये सभी विचार जन-जन तक पहुँचें इसके लिए जो योजना बनाई, उसका नाम रखा—युग निर्माण योजना। इस क्रांतिकारी चिंतन को जन-जन तक पहुँचाने के लिए युग निर्माण योजना नामक मासिक पत्रिका प्रारंभ की। यह पत्रिका भावी महाभारत में अर्जुन की भूमिका निभाने के लिए प्रकाशित की जाती है। इस महाभारत में श्रीकृष्ण की भूमिका अखण्ड ज्योति पत्रिका के जिम्मे है। श्रीकृष्ण और अर्जुन—दोनों मिलकर ही महाभारत जीत सकेंगे। अतः सभी हिंदी भाषी परिजनों को दोनों ही

पत्रिकाएँ नियमित पढ़ने की आदत डालनी चाहिए। तीसरा प्रकाशन 'प्रज्ञा अभियान पाक्षिक' है, जो विश्व में चल रहे सत्कार्यों की जानकारियाँ जन-जन तक पहुँचाकर इस महाभारत में संजय का दायित्व निभाता है।

मिशन की अनेक योजनाएँ और कार्यक्रम हैं, समय-समय पर नए-नए कार्यक्रम भी दिए जाते हैं। हमें सभी में अपना योगदान यथाशक्ति करना चाहिए। **पत्रिकाओं के सदस्य बनाना ज्ञानयज्ञ का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य है।** अन्य दिनों में अन्य योजनाओं और कार्यक्रमों में सहयोग करें, पर नवंबर और दिसंबर के दो माह पत्रिका विस्तार हेतु नियोजित करने चाहिए। लगभग सभी की सदस्यता दिसंबर में समाप्त होती है। पत्रिकाओं का वर्ष भी जनवरी से दिसंबर माना गया है। अतः इन्हीं दिनों पुराने सदस्यों को पुनः सदस्य बनाएँ, साथ ही नए लोगों से नियमित संपर्क करके सदस्य बनाने का अभियान चलाएँ। सभी परिजनों को इस शुभकार्य में तत्परता दिखानी चाहिए। निम्नांकित सुझावों पर अमल कर सकते हैं।

(1) 4-6 लोगों की टोली घर-घर जाए। पुरानी पत्रिका दिखाकर तथा महत्त्वपूर्ण प्रसंगों की चर्चा कर राशि लेकर उन्हें सदस्य बनाएँ। रसीद पर पूरा पता, पिन कोड और मोबाइल नंबर सहित अवश्य लिखें। यथाशीघ्र अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि तथा शांतिकुंज आदेश सहित धनराशि भेज दें।

(2) नए परिजनों से अनुरोध करें कि वे भी आपकी तरह जनसंपर्क कर नए लोगों को सदस्य बनाएँ। उनके प्रयास का कितना बड़ा प्रभाव होगा—यह भी बताएँ। कहें कि अगर सभी परिजन आपकी तरह एक-एक भी नए सदस्य बनाएँगे तो पत्रिका की संख्या दूनी हो जाएगी।

(3) परम वंदनीया माताजी तथा अखण्ड-दीप की जन्मशताब्दी के महत्त्व को बताकर अपनी बात को पुष्ट करें। हर परिजन कम-से-कम दस नए सदस्य तो जोड़े ही। निकट के मित्र, रिश्तेदार, बेटे-बेटियाँ जो दूर रहते हैं, उन्हें आसानी से जोड़ा जा सकता है।

(4) हमारी हर पत्रिका पर लिखा रहता है "यह पत्रिका आप स्वयं पढ़ें। कम-से-कम दस अन्य परिचितों को पढ़ाएँ—ताकि ज्ञान का आलोक जन-जन तक पहुँच सके।" आशा है, इस भावना के अनुरूप नए सदस्य बनाए जाएँगे।

अनुरोध है कि राहें अनेक हो सकती हैं, पर मंजिल एक है। जिनमें पूज्य गुरुदेव के विचारों के प्रति श्रद्धा है, वे यदि संकल्पबद्ध होकर पूरे मन से कार्य करें तो सफलता निश्चित है। असफलता का अर्थ है कि सफलता का प्रयास पूरे मन से नहीं हुआ। **हर परिजन के मन में एक जुनून चढ़ जाए, एक नशा चढ़ जाए कि उसे पत्रिकाओं की संख्या बढ़ानी है तो कोई कारण नहीं कि सफलता न मिले।** मना करने वालों के लिए बहाने बहुत हो सकते हैं, पर वे केवल बहाने हैं, जो सच्चे नहीं होते। विपरीत परिस्थितियों में कार्य करना, तूफान में भी दिये की भाँति जलना—गुरुदेव ने अपने आचरण से सिखाया है, इसीलिए वे आचार्य हैं। हम आपकी प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा करेंगे। ❐

ज्ञातव्य

परिजन ध्यान दें

★ शिविरों में भाग लेने के लिए एक दिन पूर्व पधारें।
★ कृपया बिना स्वीकृति के न आएँ।
★ आवास की व्यवस्था ऊपर की मंजिलों में रहेगी।
★ अपना नाम, पूरा पता, पिन कोड, मोबाइल नंबर, पद-व्यवसाय, आधार कार्ड नंबर, जन्म-तिथि आदि का पूरा विवरण दें।
★ किसी भी शिविर में अतिवृद्ध, बीमार, अनुशासन पालन करने में असमर्थ परिजन न आएँ।

आगामी नौ दिवसीय अनुष्ठान साधना सत्र

गायत्री तपोभूमि में चल रहे नौ दिवसीय अनुष्ठान साधना सत्र के आगामी शिविर निम्नलिखित हैं—

नवंबर, 2025	दिसंबर, 2025	जनवरी, 2026	फरवरी, 2026
22 से 30	01 से 09	23 से 31	8 से 16
			19 से 27

नोट : वही परिजन आवेदन करें, जो प्रतिदिन 30 माला गायत्री मंत्र जप कर सकें।

पुस्तक मेला समाचार

लखनऊ (उ. प्र.) गायत्री ज्ञान मंदिर इंदिरा नगर, लखनऊ द्वारा राष्ट्रीय पुस्तक मेले में गायत्री परिवार के संस्थापक युगऋषि पं० श्रीराम शर्मा आचार्य द्वारा रचित साहित्य को सुव्यवस्थित ढंग से प्रदर्शित किया गया। इस 11 दिवसीय पुस्तक मेले में लखनऊ के नगरवासियों ने हजारों की संख्या में युगऋषि के साहित्य का अवलोकन किया एवं अपनी रुचि के साहित्य को क्रय करके भी ले गए। पुस्तक मेले में आने वाले गणमान्य लोगों में महामहिम राज्यपाल, उ. प्र. के मुख्यमंत्री, मंत्री, विधायक, सांसद, आई.ए.एस., आई.पी. एस., कवि, चिंतक, महिलाएँ, छात्र-छात्राएँ, अमर उजाला, दैनिक जागरण, नवभारत टाइम्स, लोकमत के संपादकगण इत्यादि प्रमुख रहे।

युवा शिविर

12 से 14 नवंबर, 2025

राष्ट्र एवं समाज निर्माण में युवा शक्ति का विशेष योगदान होता है। युवा पीढ़ी के समुचित मार्गदर्शन हेतु यह शिविर यहाँ आयोजित किया जा रहा है। इच्छुक परिजन इसमें भाग लेकर अवश्य लाभ उठाएँ।

कन्या कौशल शिविर

17 से 19 नवंबर, 2025

इक्कीसवीं सदी नारी सदी है, मातृशक्ति के विविध रूपों माँ, बहन, पत्नी, पुत्री आदि से अगणित अनुदान मानव को प्राप्त होते हैं, उनकी कुशलता, दक्षता, समर्थता के लिए दिव्य मार्गदर्शन हेतु यह शिविर आयोजित किया गया है। बहनों से अनुरोध है कि वे इस शिविर में अवश्य भागीदार बनें।

40 दिवसीय अनुष्ठान साधना शिविर

12 दिसंबर, 2025 से 20 जनवरी, 2026

40 दिवसीय साधना शिविर प्रतिवर्ष की तरह इस वर्ष भी यहाँ उपरोक्त तिथियों में आयोजित। भागीदारी हेतु आत्मीय परिजन समयपूर्व स्वीकृति प्राप्त कर इसका लाभ उठाएँ।

प्राकृतिक चिकित्सा के शरीर-शोधन शिविर

यहाँ शरीर-शोधन शिविर रोग-प्रतिरोधक शक्ति बढ़ाने के लिए तथा सामान्य शारीरिक एवं मानसिक कष्ट-कठिनाइयाँ दूर करने के लिए प्रतिमाह निरंतर आयोजित किए जा रहे हैं, इनसे सैकड़ों परिजनों को आशातीत लाभ हुआ है। आप भी इन शिविरों का लाभ उठा सकते हैं एवं अपने संपर्क क्षेत्र के परिजनों को इसके लिए प्रेरित कर सकते हैं। शरीर शोधन शिविर की आगामी तिथियाँ निम्नलिखित हैं—

नवंबर, 2025	दिसंबर, 2025	जनवरी, 2026	फरवरी, 2026
दि. 1 से 7	*दि. 1 से 7*	*दि. 1 से 7*	*दि. 1 से 7*
दि. 11 से 17	*दि. 11 से 17*	*दि. 11 से 17*	*दि. 11 से 17*
दि. 21 से 27	*दि. 21 से 27*	*दि. 21 से 27*	*दि. 21 से 27*

स्वास्थ्यार्थी को जो शुल्क जमा करना है निम्नानुसार है—

1. सामान्य कमरा—[दो व्यक्तियों का शुल्क-14,000/-]
2. प्राइवेट सामान्य कमरा—[एक व्यक्ति का शुल्क-10,000/-]
3. प्राइवेट वातानुकूलित कमरा—[एक व्यक्ति का शुल्क-14,000/-]
4. वातानुकूलित कमरा—[दो व्यक्तियों का शुल्क-20,000/-]

समस्त पत्र व्यवहार, फोन, ई-मेल के लिए संपर्क सूत्र

पता—युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, मथुरा-281003

फोन नं० : (0565) 2530115, 2530128, 2530399, मो.— 09927086287, 09927086289

Email id : yugnirman@yugnirmanyojna.org

Website : www.yugnirmanyojna.org

Youtube : youtube.com/@yugnirmanyojnaofficial

Facebook : Yug Nirman Yojna Mathura

एक चमत्कारिक औषधि—लहसुन

लहसुन में एलिल डाइसल्फाईड होने से उग्र तेज गंध होती है, जिसके कारण भले ही इसे तामसी खाद्य की श्रेणी में मानकर साधकों के लिए वर्जित खाद्य माना गया हो, परंतु चिकित्सा की दृष्टि से आयुर्वेद के आचार्य चरक ऋषि एवं आचार्य सुश्रुत ने लहसुन की खूब महिमा गाई है। लहसुन में एंटिबायोटिक गुण तथा रोग प्रतिरोधक (रोगों से लड़ने का गुण) शक्ति बढ़ाने का गुण है। इसमें एलिसिन होता है। लहसुन शरीर के हानिकारक कोलेस्ट्रॉल को नष्ट करता है तथा अच्छे लाभदायक कोलेस्ट्रॉल को बढ़ाता है। हृदय रोग, उच्च रक्तचाप तथा कैंसर जैसे जानलेवा रोग को नियंत्रित करने में कच्चा लहसुन सेवन करने से 70 प्रतिशत लाभ मिलता है, ऐसा माना गया है।

लहसुन की प्रकृति उष्ण होने के कारण सबके लिए अनुकूल नहीं है। जलोदर, कुष्ठ, गठिया, संधिवात, सायटिका, पक्षाघात (लकवा) तथा बोन टी. बी. (अस्थि क्षयरोग), दमा (अस्थमा), कब्ज, दरद, कृमि रोग, हृदय रोग, कैंसर में यह औषधि चमत्कारिक सिद्ध हुई है। दरदनाशक औषधि के रूप में लहसुन की बड़ी भूमिका है।

सावधानी

रक्तपित्त, वातरक्त, उलटी-दस्त तथा गर्भवती महिला को लहसुन का सेवन नहीं कराना चाहिए। लहसुन की प्रकृति गरम है।

औषधीय घरेलू प्रयोग

● **संधिवात, गठिया, सायटिका में—** (1) लहसुन के सिद्ध तेल से मालिश करने से वातजनित पीड़ा दूर होती है।

(2) लहसुन को पीस लें। पहले नारियल का तेल या गोघृत पीड़ा वाले स्थान पर लगा दें, तत्पश्चात पिसी हुई लहसुन का लेप लगा दें। तुरंत दरद से राहत मिलती है।

(3) विशेष प्रयोग— 1 किलो लहसुन की कली छीलकर, पीस लें तथा 1 किलो दूध में मिलाकर पकाएँ जब मावा-सा बन जाए, तब 1 किलो पिसी मिसरी या देशी खाँड़ मिलाकर हलुवा-सा बना लें तथा स्वाद के लिए थोड़ी मात्रा में इलायची, बादाम, अखरोट, चिरौंजी सूखे मेवे मिलाकर रखें। यह प्रतिदिन 20 ग्राम सेवन करने से गठिया, संधिवात, सायटिका में लाभ होता है।

● **तेज सिरदरद में—** (1) दरद को तुरंत चूस लेने का गुण लहसुन में है। जिस ओर दरद हो रहा हो, उस ओर की कनपटी पर पहले घृत लगा दें तत्पश्चात 4-5 लहसुन की कली, पीसकर लेप करें। चमत्कारिक प्रभाव से दरद गायब हो जाएगा। थोड़ी देर बाद लेप हटा दें। बिना चिकनाई लगाए (घृत या तेल के बिना) त्वचा पर लहसुन नहीं लगाना चाहिए, अन्यथा त्वचा पर निशान बन जाएगा।

(2) लहसुन को पीसकर शहद के साथ मिलाकर लेप लगाएँ। सिरदरद बंद हो जाएगा।

● **दाँत व मसूढ़ों की पीड़ा में—** लहसुन के रस में रूई भिगोकर दरद वाले दाँत में दबाकर रखें। मसूढ़ा फूल गया हो, टीस उठ रही हो या दंतकृमि हो, लाभ होगा।

● **कानदरद में—** लहसुन का रस 50 ग्राम 50 ग्राम सरसों के तेल में पका लें। यह सिद्ध तेल ठंढा करके एक शीशी में डालकर सुरक्षित

रखें। जब उपयोग में लाना हो हलका गरम करें, रूई के सहारे 1-2 बूँद कान में टपका दें। यह सिद्ध तेल खाज-खुजली में भी मालिश के लिए उपयोगी है।

● **काली खाँसी में**—कुकर खाँसी में लहसुन की कलियों की माला बच्चों के गले में पहनाने की ग्राम्य प्रथा इसी आधार पर प्रचलित है। 20 बूँद लहसुन का रस शरबत में मिलाकर 4-4 घंटे में पिलाने से शीघ्र लाभ होता है।

● **पेशाब की रुकावट में**—लहसुन में मूत्रल गुण है। लहसुन का 4 बूँद रस एक कप चाय में मिलाकर पिलाने से पेशाब की रुकावट दूर होती है।

● **घ्राणशक्ति की कमी में**—सूँघने की शक्ति कमजोर होने पर लहसुन का रस सुँघाते रहने से घ्राणशक्ति पुनः वापस आ जाती है।

● **घाव के कीड़े**—संक्रमित घाव पर लहसुन का सिद्ध तेल लगाने से घाव के कीड़े मर जाते हैं। घाव ठीक होने लगता है।

● **अस्थिक्षय (बोन टी. बी.) में**—प्रतिदिन लहसुन की 2-3 कली कच्ची चबाकर पानी पी लें। इससे बोन टी. बी. का रोग नष्ट हो जाता है। लहसुन क्षयरोग के वैक्टीरिया को नष्ट कर देता है।

लकवा में चाय के साथ—प्रातः-सायं चाय में 3 ग्राम लहसुन का रस मिलाकर देशी खाँड़ डालकर पीने से लाभ होता है।

● **पक्षाघात (अर्दित) में**—मुँह टेढ़ा हो जाना (अर्दित) भी एक प्रकार का मुँह का लकवा है। लहसुन की छिली हुई कलियाँ 250 ग्राम को 500 ग्राम दूध में मंद आँच पर पकाकर अच्छी तरह मसल लें, फिर दो बार आग पर रखकर खोवा-सा बना लें। देशी खांड स्वादानुसार मिलाकर पेड़े बनाकर रखें। रोगी को यह एक पेड़ा रोज प्रातःकाल खिलाएँ। चेहरे एवं मुँह के लकवा में अत्यंत लाभप्रद है। आधे शरीर के लकवा में भी यह प्रयोग लाभप्रद है।

● **कफजनित आधाशीशी के दरद में**—लहसुन का रस 10 ग्राम में 5 रत्ती हींग अच्छी तरह मिलाकर रखें। जब आवश्यकता पड़े, जिस तरफ सिरदरद हो रहा हो, उस नासिका में टपका दें। कुछ ही देर में लाभ होगा।

● **पाचन शक्ति की कमी तथा रक्तचाप में**—एक पोती लहसुन 200 ग्राम मात्रा में लेकर छीलकर, काटकर सवा किलो गोदुग्ध में मिलाकर मंद आँच पर धीरे-धीरे पकाकर मावा बना लें। इस मावे में बराबर मात्रा में शर्करा मिलाकर पेड़े बना लें और काँच के पात्र में रखें। एक या दो पेड़ा प्रातः निराहार दूध के साथ सेवन करने से रक्तचाप संतुलित रहता है। हृदय की धड़कन सम बनी रहती है। पाचन-शक्ति सुदृढ़ बनती है।

● **लहसुन का तेल उपयोग एवं बनाने की विधि—**

उपयोग—लहसुन का तेल जोड़ों के दरद, स्नायविक दरद, संधिवात, गठिया, सूजन, मधुमक्खी, बिच्छू और बर्र का डंक तथा त्वचा के विकार खुजली इत्यादि में मालिश के लिए उपयोगी होता है। कान दरद के रोगियों तथा जिनको कम सुनाई देता है। उनके कान में यह तेल गुनगुना कर रूई के सहारे एक-दो बूँद कान में टपका देने से लाभ मिलता है।

लहसुन का तेल बनाने की विधि—तिल का तेल एक लीटर लेकर लोहे की कड़ाही में डालकर उसमें 20 ग्राम रतनजोत तथा 250 ग्राम लहसुन की कली छीलकर डाल दें तथा मंद आँच पर अच्छी तरह पकावें। जब कलियाँ जल जाएँ, तब आग पर से बरतन उतारकर

ठंढा कर लें तथा छानकर काँच की बोतल में सुरक्षित रखें।

● **खट्टी डकारें आना**—बिना दूध तथा बिना चीनी की चाय बना लें। उसमें थोड़ा गुड़ मिलाकर आधा नीबू निचोड़कर लहसुन का रस पाँच बूँद मिलाकर पीएँ। यह वात, पित्त और कफ तीनों विकारों को दूर करने वाला नुसखा है।

● **सामान्य खाँसी में**—लहसुन की गाँठ जलाकर उसकी भस्म बना लें। इस भस्म की 4 रत्ती मात्र लेकर शहद के साथ दिन में तीन-चार बार चटाएँ इससे खाँसी दूर होगी। ❐

विलंब सूचना

विगत काफी समय से डाक-व्यवस्था चरमरा रही है। पाठकों तक समय से युग निर्माण योजना नहीं पहुँच रही है। 31 जुलाई, 2025 से डाकघर का नया सॉफ्टवेयर प्रारंभ होने पर लंबे समय तक बुकिंग नहीं हुई। अभी भी डाकघर में युग निर्माण योजना पड़ी हैं। अगस्त, सिंतबर, अक्टूबर, नवंबर की प्रतियाँ भी अति विलंब से गई हैं। दिसंबर की प्रतियाँ भी विलंब से जा सकती हैं।

डाक विभाग के अधिकारियों से निरंतर संपर्क किया जा रहा है—आश्वासन मिल रहे हैं। अभी भी कार्य की गति धीमी है। कब तक समाधान हो सकेगा, कुछ पता नहीं।

पाठकों को हुई असुविधा के लिए हमें खेद है। आशा है, जल्दी ही स्थिति सामान्य होगी और पाठकों को उनकी प्रिय युग निर्माण योजना समय से मिल सकेगी।

रजिस्टर्ड पैकिट

1 अक्टूबर, 2025 से रजिस्टर्ड सेवा डाक विभाग ने बंद कर दी है। अब जो पंजीकृत सुविधाएँ उपलब्ध हैं, वे कई गुना महँगी हैं, जिन्हें वहन नहीं किया जा सकता।

वार्षिक सदस्यों को रजिस्टर्ड पैकिट भेजने की व्यवस्ता बनाई गई थी। अब रजिस्टर्ड व्यवस्था बंद कर दी गई है—अतः वार्षिक/बीसवर्षीय सदस्यों को भी रजिस्टर्ड भेजना संभव न होगा। सभी को अनरजिस्टर्ड पैकिट ही भेजे जाएँगे।

वैकल्पिक व्यवस्थाओं पर मंथन चल रहा है, आशाजनक परिणाम मिलेंगे—ऐसा विश्वास है।

यदि आपको युग निर्माण योजना न मिले तो तुरंत ई-मेल *Email id : yugnirman@yugnirmanyojna.org* फोन व व्हाट्सएप नं. 7055514422 पर सूचित करें। व्हाट्सएप नं. पर बात न हो सकेगी, केवल मैसेज ही भेजें, ताकि स्पष्ट सूचना प्राप्त होना सुनिश्चित हो एवं त्वरित कार्रवाई हो सके।

तीव्र रोग शत्रु नहीं, हमारे मित्र

तीव्र रोग शत्रु नहीं, मित्र

प्रकृति हमें स्वस्थ रखने के लिए हर क्षण प्रयत्नशील रहती है। अतः प्राकृतिक नियमों का पालन करने पर हम कभी बीमार नहीं पड़ सकते। प्राकृतिक नियमों पर चलते रहने की अनिवार्यता प्राकृतिक उपचार पद्धति का आधारभूत सिद्धांत है। अन्य पद्धतियों में रोग होने पर ही उपचार द्वारा ठीक कराने की बात आती है, परंतु चिकित्सा पद्धतियों में सर्वश्रेष्ठ प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति का यह मानना है कि मनुष्य प्राकृतिक नियमों का पालन करेगा, तो बीमार पड़ने की नौबत ही नहीं आएगी। यदि रोग हो भी जाए, तो पंचतत्त्वों के उपचार (औषधिहीन उपचार) से ही कम समय में पुनः स्वस्थ हो सकते हैं।

रोग क्या है ?

रोगप्रतिरोधक क्षमता (जीवनीशक्ति) कम होने पर शरीर में विजातीय द्रव्य (तत्त्व) पैदा हो जाना ही रोग का कारण है। जब तक शरीर में पर्याप्त जीवनीशक्ति (वायटलिटी) है, तब तक विजातीय द्रव्य पैदा होने पर भी उसे शरीर से बाहर निकाल देने का कार्य जीवनीशक्ति करती है। जब वह घटती है, तब विजातीय द्रव्य (फारेन मेटर) शरीर के अंदर ही रुका रहकर शरीर के आवश्यक अंगों की कार्यप्रणाली को बाधित करता है, फलतः किसी-न-किसी नाम-रूप में वह सामने आता है, जिसे हम रोग कहते हैं।

विजातीय द्रव्य बाहर निकालने वाले चार मार्ग

प्रकृति ने विजातीय द्रव्य बाहर निकालने के लिए चार मार्ग दिए हैं—1. फेफड़ा, 2, त्वचा, 3. गुरदा और 4. बड़ी आँत। फेफड़ा ऑक्सीजन ग्रहण करता तथा कार्बन-डाई ऑक्साइड के रूप में विजातीय तत्त्व बाहर निकालता है एवं रक्त की शुद्धि करता है। त्वचा रोमछिद्रों से पसीने के रूप में तथा दोनों गुरदे खून को छानकर हानिकारक त्याज्य तत्त्वों को मूत्र के रूप में मूत्र नली द्वारा बाहर निकालते हैं। बड़ी आँत विजातीय ठोस पदार्थ मल को गुदा द्वारा बाहर निकालती है। यह प्रकृति का साधारण प्रबंध है।

प्रकृति का असाधारण प्रबंध (पाँचवा मार्ग)

जब प्रकृतिप्रदत्त इन चार रास्तों से विजातीय द्रव्य शरीर बाहर नहीं निकाल पाता, तब प्रकृति पाँचवाँ मार्ग चुनती है, जिसे हम तीव्र रोग कहते हैं। वह पाँचवाँ मार्ग फोड़े-फुंसी, सरदी-जुकाम, उलटी, दस्त, बुखार आदि के रूप में हो सकता है। इन तीव्र रोगों को ही हम शत्रु मान बैठते हैं। वस्तुतः यह प्रकृति का शरीर-शोधन का प्रयास भर है। प्रकृति हमारे शरीर को निरोगी बनाने के लिए ऐसा करती है। ऐसे समय में धैर्यपूर्वक प्रकृति के कार्य में सहयोग करना चाहिए। यदि इतना कर्त्तव्य निभा लिया जाए, तो कम समय में हम पुनः स्वस्थ हो सकते हैं। यदि हम रोग के लक्षणों को दबाने वाली चिकित्सा द्वारा प्रकृति के इन प्रयत्नों को रोकते हैं, तो दूसरे नाम-रूप में वह दबा हुआ रोग जीर्ण रोग (पुराना) के रूप में जीवन भर के लिए कष्ट देता रहेगा, जिस प्रकार दस्त रोकने पर पेट संबंधी रोग कोलायटिस, जीर्ण कब्ज आदि तथा सरदी-जुकाम आदि को रोकने या दबाने

पर फेफड़े संबंधी रोग, जैसे दमा (अस्थमा), ब्रोंकाइटिस; फोड़ा-फुंसी दबाने पर एक्जिमा आदि त्वचा रोग। दवा द्वारा रोग को दबाने पर उसी प्रकार की स्थिति होती है, जिस प्रकार कीचड़ को धूल से ढक दिया गया हो, जब भी उस पर कोई भार पड़ेगा, तो वह कीचड़ बाहर दिखाई देगी।

उपचार में दूरदर्शिता

चिकित्सा का मूल प्रयोजन केवल तात्कालिक कष्ट-निवारण ही नहीं, वरन रोग के मूल कारण को खोजना और उसका निराकरण करना होना चाहिए। प्राकृतिक चिकित्सा विधि तथा विशुद्ध आयुर्वेद का प्रारंभिक प्रयास इसी दिशा में चलता है। संसार के समस्त जीव-जंतु जब अस्वस्थ होते हैं, तब प्राकृतिक रोग-निवारक शक्ति द्वारा वह स्वयं उपचार कर लेते हैं। मनुष्य के लिए भी यह राजमार्ग खुला हुआ है।

एलोपैथिक चिकित्सा पद्धति के मूल में ही कुछ दोष रह गया है और उस मूल दोष का निवारण किए बिना गलत आधार पर चिकित्सा विज्ञान को अग्रसर किया जा रहा है। अन्य क्षेत्रों की तरह इस क्षेत्र में भी अन्वेषणों और आविष्कारों की धूम है, पर परिणाम प्रतिकूल ही सिद्ध होता चला जा रहा है। तत्काल कुछ समय के लिए कष्ट कम कर देना मात्र चिकित्सा विज्ञान की सफलता नहीं है। ऐसा तो कोई जादूगर भी कर सकता है। पीड़ित स्थान को सुन्न करके या दिमाग को पीड़ा अनुभव करने की क्षमता से वंचित करने वाले नशीले पदार्थों के आधार पर तुरंत कष्ट कम कर देने का प्रयोजन पूरा हो सकता है, पर इससे लाभ क्या हुआ? बीमारी दूसरे रूप में फूट पड़ी और चिरस्थायी बन गई तो ऐसा इलाज किस काम का रहा? यह ठीक वैसा ही हुआ कि पेड़ के पत्ते को सींचते रहे, जड़ को सींचा ही नहीं। अंततः पेड़ मुरझाकर सूखेगा ही।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान रोग के मूल कारण असंयम को रोकने तथा स्वास्थ्य-रक्षा की शिक्षा तथा व्यवस्था पर जोर देने की अपेक्षा ऐसी दवाएँ प्रस्तुत करने में लगा हुआ है, जो बीमारी के कीटाणुओं को मारने के साथ-साथ जीवनरक्षक स्वस्थ कणों को भी समान रूप से मारती हैं। ऐसी विषाक्त औषधियाँ बन रही हैं, जिनके कारण नया रोग उत्पन्न हो जाने से लगता है, मानो पुराना रोग चला गया हो।

औषधि अन्वेषण-क्षेत्र में भी, इन्हीं आधारों पर खोज हो रही है और नित नए इंजेक्शन, कैप्सूल निकलते चले आ रहे हैं। औषधि विक्रेताओं को गहरा मुनाफा होता है। रोगी को तात्कालिक लाभ कराने में अपना धंधा चमकते देख डाक्टर भी उस प्रयत्न को प्रोत्साहित करते हैं। घाटे में बेचारा रोगी रहता है, जिसका पैसा भी जाता है, शरीर भी खराब होता है और इलाज की आशा से नई व्यवस्था के जंजाल में जकड़ जाता है। जादू की तरह कुछ समय को कष्ट हलका कर देने के लालच में उसे जो चिरस्थायी हानि उठानी पड़ती है, उसे दूरदर्शिता के साथ देखा, समझा जाए, तो प्रतीत होता है कि यह क्या चिकित्सा हुई? इससे स्वास्थ्य-लाभ का मूल प्रयोजन कहाँ सिद्ध हुआ?

तीव्र रोगों में क्या करें

(1) रोगी को शुद्ध खुली हवा में पर्याप्त विश्राम कराएँ।

(2) रोग की तीव्र अवस्था में ठोस भोजन (आहार) देने से शरीर के सफाई-कार्य में लगी जीवनीशक्ति को पाचन का कार्य भी करना पड़ेगा, जिससे विष निष्कासन का कार्य ठीक प्रकार से नहीं हो पाएगा। अतः तीव्र रोगों में ठोस भोजन बंद कर दिया जाए।

(3) पानी पर्याप्त मात्रा में दिया जाए। नीबू निचोड़कर पानी में मिलाकर रोगी को देते रहें, इससे शरीर की शुद्धि में सहायता मिलेगी।

(4) रोगी को कब्ज हो तो आँतशुद्धि के लिए प्राकृतिक उपाय किए जाएँ। मिट्टी की पट्टी पेट पर 30 मिनट रखने के बाद एनिमा दें।

(5) रोगी की स्थिति 1–2 दिन भूखे रह सकने की न हो, तो फलों का रस या हरी सब्जियों का सूप एक गिलास प्रत्येक 4 घंटे के अंतर से दिया जा सकता है।

(6) रोगी के शरीर में पानी की कमी न हो, इसका विशेष रूप से ध्यान रखा जाए। उलटी–दस्त, बुखार आदि में नीबू का रस पानी के साथ प्यास न लगने पर भी पर्याप्त देते रहें। सरदी–जुकाम में गरम पानी में नीबू निचोड़कर दिया जा सकता है।

(7) रोग की तीव्रता घटने पर रोगी को 1–2 दिन फलों का रस, सूप, उसके बाद 1–2 दिन फलाहार फिर क्रमशः उबली हरी सब्जी तथा धीरे–धीरे 1–1 रोटी प्रतिदिन बढ़ाते हुए 5–6 दिन में पूर्णाहार लेने का क्रम अपनाना चाहिए।

(8) तीव्र रोगों में उपरोक्त क्रम अपनाने के साथ ही प्राकृतिक उपचार भी लिए जाएँ, तो अधिक लाभप्रद होगा।

प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति का मानना है कि तीव्र रोगों में सही आहार–विहार को ध्यान में न रखकर रोगी के परिजन उसे ठोस भोजन ग्रहण करने के लिए विवश करते हैं, जिससे रोग बिगड़ जाता है। बुखार में ठोस आहार लेने पर आँतों में गरमी बढ़ जाने से तथा जल्दी ठीक न होने से बुखार अधिक दिनों तक बना रहता है और टायफाइड (आंत्रज्वर) हो जाता है। अतः बिना औषधि के उपचार हो रहा हो, तो उपरोक्त नियमों का पालन करना चाहिए। यदि एलोपैथी दवाओं का सेवन कर रहे हों, तो उपवास नहीं करना चाहिए। पाचक, सात्त्विक, स्वास्थ्यप्रद आहार लिया जाए।

माँ भगवती प्राकृतिक चिकित्सालय (युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, गायत्री तपोभूमि द्वारा संचालित) में प्रत्येक छह माह बाद सात दिवसीय शक्ति–शोधन शिविर में भाग लेते रहने का क्रम बना लिया जाए। ❐

जापान के एक बौद्ध भिक्षु ने अपने मत के धर्मग्रंथों को प्रकाशित करने के लिए धन एकत्रित किया। उस वर्ष पानी न बरसा, भिक्षु ने वह पैसा पीड़ितों की सेवा में लगा दिया। दूसरे वर्ष बाढ़ आई। इस बार का संगृहीत पैसा उसमें लगाया गया। तीसरी बार के संग्रह से ग्रंथ छपा। उस पर तीसरा 'संस्करण' लिखा हुआ था। पूछने पर बताया गया कि दो संस्करण उन्हीं को दीख सकते हैं, जिन्हें प्रेम और सेवा की आँखें मिली हों।

अहंता छोड़िए! विनम्र बनिए!! महान बनिए!!!

नम्रता, नैतिक और आध्यात्मिक क्षेत्र की वह भावना है जो सब मनुष्यों में, सब प्राणियों में स्थित शाश्वत सत्य से, ईश्वर से संबंध कराती है। इसलिए इसे प्राप्त कर लेना अध्यात्म मार्ग में सफलता सुनिश्चित हो जाने के समान है।

नम्रता में शक्ति प्रदर्शन और पद-लोलुपता के लिए कोई स्थान नहीं है, क्योंकि ये सब अपने में स्वार्थयुक्त संकीर्णता लिए हुए हैं; जबकि नम्रता में सबका ध्यान पहले और सबके पीछे स्वयं को रखने का महत्त्वपूर्ण आदर्श है। जो अनुचित शक्ति वृद्धि करता है, वह स्वयं को सर्वोपरि रखने के लिए दूसरों का अहित करता और अनेक ऐसे निंदनीय कार्य करता है, जो नम्रता से मेल नहीं खाते। अतः स्वार्थ के लिए इसमें कोई स्थान नहीं है। इसमें केवल परमार्थ की ही गति है।

नम्रता दो प्रकार की होती है—आंतरिक, जिसे सहृदयता कहा जा सकता है और दूसरी बाह्य, जो दिखावा और अभिनय मात्र होती है। आंतरिक नम्रता जहाँ होती है, वहाँ हर प्रकार के सहयोग-सहकार सहज उपलब्ध होने लगते हैं और ऐसा व्यक्ति जल्द ही दूसरों का प्रिय बन जाता है। दूसरे उसका आदर-सम्मान भी करते हैं, किंतु बनावटीपन में ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न करने की सामर्थ्य नहीं होती। इसकी पोल भी जल्द ही खुल जाती है। ऐसे लोग जहाँ स्वार्थ देखते हैं, वहीं इसका स्वांग करते हैं और जहाँ इसकी तनिक भी गुंजाइश नहीं दीखती, वहाँ अपने निजी रूप में आ जाते हैं। ऐसे व्यक्ति दूसरों के लिए हमेशा खतरा बने रहते हैं और सरल, सच्चे व्यक्ति अक्सर इनके बनावटीपन से धोखा खा जाते हैं।

अतिशय भावुकतायुक्त विनम्रता भी ठीक नहीं। भले ही यह सच्ची हो, पर अच्छी नहीं होती। इससे बचना चाहिए। विनोबा भावे ने कहा है—''संसार में दो तरह के पाप हैं—एक की गरदन आवश्यकता से अधिक तनी हुई है, घमंड और अभिमान के कारण और दूसरे की जरूरत से ज्यादा झुकी हुई है, दीनता तथा दुर्बलता से। ये दोनों ही पाप हैं। एक उन्मत्त है, दूसरा दुर्बल-दबैल। गरदन सीधी भी हो और लचीली भी, किंतु तनी हुई न हो और न झुकी हुई।''

यह स्थिति नम्रता में निहित है। अभिमान के लिए तो वहाँ कोई गुंजाइश ही नहीं है। नम्रता में दब्बू होने का भाव इसलिए नहीं है कि उसमें शाश्वत सत्य, ईश्वर की उपस्थिति का भाव रहता है, जिसकी सामर्थ्य के बल पर गरदन सीधी रहती है और लचीली भी, क्योंकि वह सर्वत्र ईश्वर के दर्शन कर उसे स्वीकारती और उसकी सामर्थ्य के आगे नतमस्तक होती है, पर दीनता से झुकी हुई नहीं होती।

आत्मसुधार की पहली आवश्यकता है—अपने दोषों को स्वीकार करना, जो नम्रता से ही संभव है। अभिमानी व्यक्ति अपने दोषों को कभी स्वीकार नहीं करता, फलतः उसके दोषों की जटिलता बढ़ती ही जाती है। नम्रता मनुष्य को उसकी सही स्थिति का ज्ञान कराती है। अपनी स्थिति का ज्ञान, अपने दोषों की स्वीकृति मनुष्य को आत्मसुधार के लिए पर्याप्त शक्ति प्रदान करते हैं।

विनम्र बनना महानता का लक्षण है। पेड़-पौधे जब फलों से लदते हैं तो झुक जाते हैं। इसमें उनका परमार्थ भाव छिपा होता है। बाँस हवा के झोंकों के समक्ष अवनत हो जाता है। यह उसकी विशालता है। महान बनने के लिए झुकना पड़ता है, यही महानता की सबसे बड़ी विशेषता है। बाँस यदि हवा के आगे झुके नहीं, अकड़ा रहे तो क्या वह अपनी उच्च स्थिति बनाए रह पाएगा? कदाचित् नहीं। महानता जब व्यक्ति में आती है, तो विनम्रता साथ लाती है या यों कहा जाए कि विनम्रता ही व्यक्ति को महान बनाती है, दोनों एक ही बात है। दोनों सदा साथ रहती हैं। एक के बिना दूसरे की कल्पना नहीं की जा सकती।

दैनिक जीवन में इसकी उपयोगिता स्पष्ट है। कई बार यह बड़ी ही महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती और विवाद-विग्रह से बचाती है। दो पक्षों में यदि कहीं विवाद छिड़ जाए और दोनों ही पक्ष अपनी-अपनी बात पर अड़े रहें तो उसका गंभीर रूप धारण कर लेना सुनिश्चित है। मार-पीट की नौबत आ सकती है। ऐसी स्थिति में यदि कोई पक्ष अपनी हठवादिता त्यागकर नम्रता का परिचय देता है तो बात बन जाती है और तनावपूर्ण वातावरण समाप्त हो जाता है। यह उसकी विशालता है, दब्बूपन नहीं। समझदारी इसी को कहते हैं। विनम्रता का यह सबसे बड़ा लाभ है।

कई लोग विनम्र बनने में अपना अपमान समझते और हेठी मानते हैं, पर वास्तविकता इससे भिन्न है। अपना सम्मान बढ़ाने और दूसरों द्वारा प्राप्त करने के लिए स्वयं को सबसे पहले छोटा बनाना पड़ता है। नम्रता की इसी निम्नता में महानता छिपी है। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भगवान कृष्ण ने अपने जिम्मे जूठी पत्तलों को उठाने का काम लिया था। सिखों के गुरु अर्जुनदेव जूठे बरतन माँजा करते थे। अमेरिका के राष्ट्रपति अब्राह्म लिंकन के बारे में कहा जाता है कि वे मजदूरों के बीच मजदूर बनकर उनकी सहायता करने में कोई हेठी अनुभव नहीं करते थे। बाबा राघवदास गाँव की नालियों और पाखानों की सफाई किया करते थे। गांधी जी से एक बार किसी ने प्रश्न किया कि यदि आपको एक दिन के लिए भारत का तानाशाह बना दिया जाए, तो आप क्या करेंगे? उन्होंने अपनी हार्दिक इच्छा व्यक्त करते हुए कहा था—''मैं सबसे पहले सफाई करने वालों की बस्ती की सफाई करूँगा।'' यह नम्रता है, महानता की पहली शर्त। महामानवों को समाज में जो श्रद्धा, सम्मान और उच्च स्थान प्राप्त होता है, वह नम्रता के कारण बन पड़ता है। इससे कम में बात बनती ही नहीं। बादल को अपनी उच्चता बनाए रखने के लिए सदा बरसना पड़ता है। बार-बार नीचे आना पड़ता है, तभी वह बादल बरस पाते हैं।

कई अवसरों पर देखा जाता है कि कुछ लोग बातचीत के मध्य दूसरों से नम्रता का परिचय देने की इच्छा-अपेक्षा तो रखते हैं, पर स्वयं इस ओर पहल नहीं करते, जिससे बात के तूल पकड़ लेने की पूरी-पूरी गुंजाइश रहती है। ऐसे व्यक्ति अड़ियल प्रकृति के होते हैं और जब तक सामने वाले को झुकते नहीं देखते, अपने तेवर बदलते ही नहीं, यह प्रकृति अच्छी नहीं। इससे बचना ही श्रेयस्कर है। नम्रता का अर्थ है—अहंता का बंधन तोड़ देना। इस एक गुण की प्राप्ति से ही व्यक्ति में अनेक सद्गुणों की वृद्धि हो जाती है। सज्जनता, शालीनता, शिष्टता सौम्यता सब कुछ आ जाती हैं। नम्रता-युक्त कार्य विरोधियों को ठंढ़ा करते और अनुगामियों की संख्या बढ़ाते हैं। विनम्रता अपनाना हर दृष्टि से अभीष्ट है।

विनम्र होना गौरव की बात है। हीनता, दीनता से विनम्रता का कोई संबंध नहीं। विनम्रता सरलतायुक्त पर सुदृढ़ होती है।

विनम्रता का अभ्यास हर किसी को करना ही चाहिए। अहंकारी विनम्र होने में हेठी समझते हैं, पर विनम्र व्यक्ति अहंकार को अपनाने में जीवन-गरिमा को गिरती हुई देखते हैं। वे हर कीमत पर अपनी विनम्रता बनाए रखते हैं।

❐

आजीवन सदस्य कृपया ध्यान दें

आपने जब आजीवन सदस्यता स्वीकार की थी, तब से अब तक महँगाई इतनी अधिक बढ़ चुकी है कि पत्रिका की आजीवन सदस्यता का निर्वहन कर पाना कठिन हो रहा है। अब पूर्व की सुरक्षानिधि में आजीवन सदस्यता बनाए रखना संभव नहीं जान पड़ता। जो आजीवन सदस्य रुपये 150 (सन् 1987) में बने थे, उन्हें अभी तक पत्रिका भेजी जा रही है; जबकि वार्षिक चंदा रुपये 12 (सन् 1987) से बढ़कर रुपये 150 हो गया है— भविष्य में और भी बढ़ता रहेगा। ऐसी स्थिति में आजीवन सदस्यता को पुरानी शर्तों पर जारी नहीं रखा जा सकेगा।

अब नई व्यवस्था के अनुसार आजीवन सदस्यता 20 वर्ष तक सीमित रहेगी। उसका अब चंदा रुपये 3000/- होगा। हम सबकी यही अपेक्षा है कि जो श्रद्धा-स्नेह का संबंध लंबे समय से बना हुआ है, वह और भी प्रगाढ़ होगा। युग निर्माण योजना का आलोक आपको एवं अन्य परिजनों को आलोकित करता रहेगा।

इसके लिए हम आपके समक्ष निम्न विकल्प प्रस्तुत कर रहे हैं—

(1) आपका आजीवन शुल्क जो भी जमा है, उसे काटकर शेष रुपया और भेज दें, ताकि आपकी आजीवन सदस्यता (20वर्षीय) बनी रहे। राशि बैंक ड्राफ्ट/चैक/से RTGS/ NEFT भेजी जा सकती है।

(2) आपकी आजीवन सदस्यता समाप्त कर दी जाए एवं जमा सुरक्षानिधि वार्षिक चंदा में ट्रांसफर कर दी जाए। उस राशि से वार्षिक चंदा रुपये 150/- के हिसाब से जब तक का चंदा बने, युग निर्माण योजना भेज दी जाए।

(3) यदि किन्हीं कारणोंवश ऐसा संभव न हो पा रहा हो तो अपने बैंक खाते की जानकारी भेजने का अनुग्रह करें, जिससे आपको राशि वापस भेजी जा सके। विवरण मिलने पर आपके खाते में सीधे रुपया भेज दिया जाएगा।

पत्र-व्यवहार में अपनी सदस्य संख्या, नाम, पूरा पता, फोन नंबर, ई-मेल आई.डी. का उल्लेख अवश्य करें। पूर्ण विवरण के साथ अपनी सहमति का पत्र डाक/ई-मेल द्वारा भेजने का अनुग्रह करें। गायत्री तपोभूमि का व्हाट्सएप नं. 7055514422 भी उपलब्ध है आवश्यकतानुसार व्हाट्सएप नं. का भी उपयोग कर सकते हैं।

वयोवृद्ध की उपेक्षा न करें

पीढ़ियों का अंतर कहें या फिर पीढ़ियों की अंतरव्यथा; इसकी कथा में कसक भरी तड़पन है, गहरी चुभन है। जिंदगी की ढलती साँझ सिसकियों में सिमटी है और जिंदगी की चमकदार सुबह अनजाने-अनचाहे धुँधली हो रही है। दादा-दादी, नाना-नानी को उनके पोते-पोतियों, नाती-नातिनों का प्यार नहीं मिल पा रहा और पोते-पोतियाँ, नाती-नातिनें अपने दादा-दादी, नाना-नानी की गोद में बैठकर मीठी कहानियाँ नहीं सुन पा रहे। ऐसा सब इसलिए, क्योंकि इसमें सबसे बड़ी बाधा दादा-दादी, नाना-नानी के अपने बच्चे और पोते-पोतियों, नाती-नातिनों के अपने माता-पिता हैं। पुरातन अतीत से भारतीय परिवारों के घर-आँगन में प्राय: तीन पीढ़ियों की हँसी-खुशी से भरे ठहाके-कहकहे गूँजते रहे हैं, पर अब यह गूँज इधर कुछ वर्षों से फीकी-सी पड़ गई है। वैसा अब कुछ नहीं रह गया, जिसके लिए भारत की परिवार-व्यवस्था कभी सुविख्यात हुआ करती थी।

ऐसा कैसे हो गया? इसके जवाब में विशेषज्ञ, विद्वान, विचारशील लोग जेनरेशन गैप को कारण मानते हैं। जेनरेशन गैप यानी कि पीढ़ियों का वह अंतर, जो कि घर-परिवार की खुशियाँ खा गया। सवाल यह है कि वह पहले क्यों नहीं था, अब कहाँ से आ गया? इसका जवाब बड़ा ही सीधा-सादा है कि जेनरेशन है, पीढ़ियाँ हैं तो उनमें गैप या अंतर तो होगा ही, परंतु इसके प्रभाव पहले या तो नदारद थे अथवा बहुत कम थे, लेकिन अभी इन प्रभावों में बाढ़ आई हुई है। जो युवा हैं, प्रौढ़ हैं वे अपने माता-पिता की नहीं सुनना चाहते और जो बच्चे हैं, वे सब अपने माता-पिता की नहीं सुनना चाहते। यह शिकायत माता-पिता की है, परंतु जो बच्चे हैं, वे छोटे हों या बड़े उनका कहना है कि माता-पिता उन्हें समझना ही नहीं चाहते।

वर्तमान परिस्थितियाँ कुछ ऐसी हो चली हैं कि पुरानी पीढ़ी और नई पीढ़ियों का मन एकदूसरे के प्रति शिकायत से भरा हुआ है। हरेक के अपने-अपने तर्क हैं, तथ्य और प्रमाण हैं। इन सभी के बीच जिंदगी की डोर ऐसी उलझ गई है कि सुलझने के बजाय टूटने लगी है। इस टूटन का दरद हर किसी के चेहरे पर साफ-साफ देखा जा सकता है। बच्चे हों, जवान हों या फिर बूढ़े हों, कोई इससे अछूता नहीं है।

जेनरेशन गैप अथवा पीढ़ियों का अंतर आज विवाद और नासमझी का परिचय तथा पर्याय बन गया है। इस संबंध में कई पुस्तकें भी लिखी गईं, जो बड़ी चर्चित रहीं। इनमें से स्ट्राक्स और हाप की पुस्तक 'दि नेक्सट जेनरेशन', विलियम कोलबुक की पुस्तक 'कम्युनिकेशन और कन्फ्यूजन बिटवीन जेनरेशन', कर्ट पैटरसन की पुस्तक कि जेनरेशन गैप—व्हाट, व्हाई एवं हाउ' की काफी चर्चा मिली। दुनिया के कई विश्वविद्यालयों ने इस पर अपनी अनुसंधान, परियोजनाएँ भी चलाईं, जिनमें 'दि स्पिरिट ऑफ जेनरेशन' नाम की अनुसंधान परियोजना को विश्व ख्याति मिली। इन सबके अलावा समाचारपत्रों एवं संचार के अन्य माध्यमों ने भी बहुत कुछ कहा, लिखा और बोला।

बात सचमुच पीड़ा की है, जब अपने ही बच्चे अपनी ही न सुनें, तिरस्कृत करें, यहाँ तक कि घर से बाहर कर दें। इसी तरह वे बच्चे भी क्या करें, जब माता-पिता उनकी भावनाओं और विवशताओं को सुनने-समझने से इनकार कर दें। परमपूज्य गुरुदेव इन सारी चीजों को समझदारों की नासमझी कहते थे, जो अचानक उत्पन्न हो गए सांस्कृतिक संकट के कारण बढ़ गई है। उन्होंने अपने लेखों व प्रवचनों में बार-बार यह बात कही कि पीढ़ियाँ हैं तो उनमें आयु का, समझ का, सोच और दृष्टिकोण का अंतर तो होगा ही, पर यह अंतर जरूरी तो नहीं विवाद का कारण बने। इसे संवाद में भी तो परिवर्तित किया जा सकता है। बच्चों की हर बात में टोका-टाकी की जाए, यह तर्कसंगत और न्यायसंगत नहीं है। इसी तरह माता-पिता को अनुपयोगी और अस्वीकार्य कहा जाए यह भी उचित नहीं है।

युगऋषि परमपूज्य गुरुदेव पीढ़ियों के बीच उपजे विवाद के मूलतः पाँच कारण गिनाया करते थे—(1) संस्कारविहीन शिक्षा, (2) आर्थिक परिस्थितियाँ, (3) आज की मशीनी जिंदगी, (4) सामाजिक दायित्वों की उपेक्षा, (5) सांस्कृतिक मूल्यों व परंपराओं के प्रति आस्था में आई भारी कमी। इन पाँच बातों का खुलासा करें तो संस्कारविहीन शिक्षा के कारण पारिवारिक संबंध दरके हैं। दया, प्रेम, सेवा, त्याग और सहनशीलता की बात नई पीढ़ी भूलती जा रही है। इस वजह से वह अपने माता-पिता को अपने जीवन की बाधा मानने की भूल करने लगी है।

इस क्रम में दूसरा बिंदु—आर्थिक परिस्थितियाँ हैं, जो विसंगतियाँ उत्पन्न कर रही हैं। बढ़ती महँगाई, बेरोजगारी, गरीबी, कम आमदनी आदि अनेक कारण हैं, जिनकी वजह से माता-पिता की बीमारियाँ बोझ लगने लगती हैं। तीसरा बिंदु आज की मशीनी जिंदगी है—अधिक धन कमाने की चाहत या फिर परिवार के बढ़े खरचों ने जीवन का मशीनीकरण कर दिया है। बस, भाग-दौड़ में समय चला जाता है। कई बार माता-पिता अपने बेटे-बहुओं की इस व्यस्तता को अपनी उपेक्षा मान लेते हैं। चौथा बिंदु सामाजिक दायित्वों के प्रति उपेक्षा है, इस वजह से कोई अपने स्वार्थ और अपने अहं से उबर नहीं पा रहा है। उसके लिए अपनी उपलब्धियाँ सब कुछ हो गई हैं; जबकि उसे अपने पारिवारिक, सामाजिक दायित्वों के प्रति भी उन्मुख होना चाहिए। इस क्रम में पाँचवाँ बिंदु विशेष महत्त्वपूर्ण है—सांस्कृतिक मूल्यों व परंपराओं के प्रति आस्था में आई कमी, जिस महान संस्कृति में हम अपने दिवंगत बुजुर्गों, यानी कि पितरों के प्रति श्रद्धा-भाव रखते हैं, उसी संस्कृति के अनुयायी अपने माता-पिता की उपेक्षा करने लगे, यह बात चिंता व चिंतन के योग्य है।

पीढ़ियों के बीच होने वाले विवाद और उसके सभी कारणों का समाधान युगद्रष्टा गुरुदेव ने वानप्रस्थ परंपरा के रूप में दिया है। गुरुदेव अपनी गोष्ठियों व वार्त्ताओं में यह बात बार-बार कहते थे कि जब अपनी आयु बढ़ने लगे, घर के बच्चे बड़े होने लगें तब माता-पिता के कदम घर से बाहर लोकसेवा के लिए निकलने ही चाहिए। घर में बैठकर हर बात में बच्चों को टोकते रहना न केवल बच्चों के आत्मविश्वास को कम करता है, बल्कि उनकी नजर में स्वयं को बाधक और विरोधी बनाता है। गुरुदेव ने इस संबंध में एक पुस्तक भी लिखी थी—'उनसे जो पचास के हो चले।' लोकसेवा में तन्मयता-तल्लीनता से बढ़ती उम्र में स्वास्थ्य भी ठीक रहता है, मन में भी उत्साह बना रहता

है। घर में बाहर रहने से अवसाद-विषाद व कलह के अवसर भी नहीं आते।

लोकसेवा से लोक-सम्मान का मिलना भी स्वाभाविक है। जिसे बाहर सम्मान मिलता है, उसे घर के लोग भी सम्मानित नजर से देखते हैं। जीवन की प्रौढ़ता होती भी सेवा और साधना के लिए है। गोस्वामी तुलसीदास ने भी लिखा है—

चौथेपन जाहिंहि नृप कानन अर्थात चौथेपन में वन के लिए प्रस्थान करना चाहिए। आधुनिक युग में लोकसेवा के लिए आंशिक या पूर्णतया गृहत्याग वनगमन की ही भाँति हैं। इसके अलावा बच्चों के, युवाओं के भी अपने महत्त्वपूर्ण दायित्व हैं। बुजुर्गों के आशीर्वाद के बिना जीवन पूर्ण नहीं होता। अपनी संस्कृति का सूत्र भी यही—**अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः। चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशोबलम्॥** अर्थात जो लोग वृद्धों की सेवा करते हैं, उनकी आयु, विद्या, यश और बल, इन चारों में निरंतर वृद्धि होती है। बात एकदूसरे को समझने की है, समझदारी भरे संवाद की है। यह हो तो पीढ़ियों का अंतर, पीड़ा और परेशानी का नहीं, सुख-शांति और समृद्धि का कारक बनेगा। बुढ़ापे का अनुभव भरा प्यार, यौवन और बचपन की ऊर्जा व उल्लास भरे सत्कार से मिल जाए तो परिवार की हँसी-खुशी ठहाके-कहकहे वापस लौटने में देर नहीं लगेगी। नई पीढ़ी द्वारा वर्तमान में वृद्धजनों की उपेक्षा प्रायः देखने को मिलती है, उन्हें आज अपनी समझ बदलने का समय है। ❐

महाराणा प्रताप देश की स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ रहे थे। यों युद्ध तो आए दिन चलते रहते थे, पर वे अतिक्रमण या आत्मरक्षा के लिए होते थे। व्यापक सुरक्षा के लिए प्रताप ही जूझ रहे थे।

इतने बड़े मुगल साम्राज्य के विरुद्ध छोटी सेना के सहारे लड़ते-लड़ते उन्हें असाधारण कठिनाइयों का सामना करना पड़ता। हिम्मत तो न हारते, पर युद्ध सामग्री तो चाहिए ही। सैनिकों का भी पेट भरना और तन ढकना आवश्यक था। यह सब जब समाप्त होने लगे तो युद्ध को जारी रखना एक विकट प्रश्न हो गया। कुछ सूझ नहीं पड़ रहा था कि आगे क्या किया जा सकता है? राणा की चिंता का समाचार भामाशाह तक पहुँचा, वे नगर सेठ थे। पर परिवार भी बड़ा था। वे सब भी उन्हीं के व्यवसाय पर अपनी आजीविका चलाते थे।

भामाशाह ने सोचा परिवार के सभी छोटे सदस्यों को निजी पुरुषार्थ से सामान्य निर्वाह पर संतोष करने के लिए कहा जाए और जो कुछ जमा पूँजी है, उस सब को राणा के चरणों में रख दिया जाए। उनने वही किया। करोड़ों की संपत्ति राणा को मिल गई। उनने नए उत्साह से नए साधनों के सहारे सेना का नया गठन किया और इस प्रकार युद्ध संचालन किया कि विपक्षियों के पैर उखड़ गए।

गुरु नानकदेव जयंती पर विशेष

महान संत : गुरु नानकदेव

गुरु नानक ने जब समाज को अनेक भागों में बँटा देखा तो अनुभव किया कि इसके कारण ही हिंदू जाति निर्बल होकर दूसरों की ठोकरें खा रही है। उन्होंने यह भी देखा कि पुजारी-पंडित वर्ग ने धर्म पर एकाधिकार किया हुआ है और वे धार्मिक संस्कारों का कराना अपनी बपौती समझकर मुफ्त का माल उड़ा रहे हैं। इसी वर्ग ने अपने स्वार्थ-साधन के लिए जनता को राजनीतिक और सामाजिक चेतना से हीन बना दिया था, जिससे वह देशी और विदेशियों के तरह-तरह के अन्यायों को मूक बनकर सहन कर रही थी।

इस तरह नानक जी ने जब समाज के रोग को पहचान लिया तो उन्होंने एक ऐसा संगठन बनाने का निश्चय किया, जिसमें धर्म को व्यापार की चीज न बनाया जाए और जिसमें धार्मिक तथा जातीयता की दृष्टि से किसी को छोटा-बड़ा न माना जाए। इसलिए उन्होंने पृथक-पृथक पूजा-उपासना के स्थान पर सामुदायिक उपासना का प्रचलन किया। इसमें सब कोई एक जगह एकत्रित होकर सृष्टिकर्त्ता भगवान की स्तुति और गुणगान करते थे। इस उपासना में भेंट-पूजा चढ़ाए जाने या किसी एक व्यक्ति के लाभ का कोई सवाल न था। इसमें जाति की दृष्टि से ऊँच-नीच, स्त्री-पुरुष तथा विभिन्न धर्मों का भी भेद नहीं किया जाता था। सब कोई मिलकर एक जगह बैठते थे और गुरुजी के सत्य-धर्म उपदेशों को सुनते थे।

उन्होंने अपने इस सिद्धांत को व्यावहारिक रूप देने का दूसरा कार्य यह किया कि सब लोगों का खाना एक साथ बने और सब एक ही पंगत में बैठकर भोजन करें। चौके-चूल्हे की पृथकता ने भी हिंदुओं में भेदभाव की अनेक दीवारें खड़ी कर दी थीं। कौन, किसके हाथ का खा सकता है और किसके हाथ का नहीं खा सकता; इसका जंजाल इतना अधिक बढ़ा दिया था कि हिंदुओं में प्राय: ''आठ कनौजिया नौ चूल्हे'' वाली कहावत चरितार्थ होने लगी थी। गुरु नानक ने अपने यहाँ लंगर-प्रथा प्रचलित करके इसकी जड़ ही काट दी। वे इस संबंध में कहाँ तक दृढ़ रहते थे, इसकी एक घटना इस प्रकार बतलाई जाती है—

एक बार किसी उत्सव के उपलक्ष्य में भोज था। जब सब संगत में उपस्थित जनों की पंगत बैठ गई और भोजन परोसा गया तो शिष्यों ने कहा—''महाराज, आरंभ कीजिए।'' गुरुजी ने चारों तरफ नजर दौड़ाई और बोले—''अभी नहीं, रोटी बनाने वाले तो आए ही नहीं।'' जब वे आ गए, तब भी गुरुजी ने खाना शुरू नहीं किया और आँगन में झाड़ देने वालों को दूर खड़ा देखकर कहा—''उन्हें भी तो बुलाओ।''

यह घटना करतारपुर की है, जहाँ वे अपनी अंतिम अवस्था में निवास करते थे। उस समय का जिक्र करते हुए कहा गया है—''यहीं पर वे गुरु कहलाए और यहीं पर अपनी मान्यताओं को उन्होंने मूर्तरूप दिया। गुरु तो बन गए, पर

अहंकार, आडंबर का नाम नहीं। बस, समझिए बड़े भाई की तरह रहने लगे। चढ़ावा चढ़ने लगा, संपदा एकत्रित होने लगी, पर नानक जी के लिए इसमें से एक पाई भी हराम थी। उन्होंने अपनी गुजर खेती-बाड़ी और मूँज की रस्सी बँटकर की। कबीर, रैदास, नानक के अतिरिक्त बहुत थोड़े ऐसे संत-फकीर हुए हैं, जो ऋद्धि-सिद्धयुक्त होते हुए भी अपने दस नाखूनों की कमाई पर गुजर करना पसंद करते थे और एक खास बात यह हुई कि अपनी वानप्रस्थ अवस्था में जब वे गुरु के समान पूजे जाने लगे तो नानक जी ने साधु के बजाय गृहस्थों का-सा वेश धारण कर लिया। वे नहीं चाहते थे कि वे या उनके उत्तराधिकारी अन्य गुरु, साधुओं की वेशभूषा के कारण पूजनीय समझे जाएँ। वे गेरुआ वस्त्र और कंठी-माला, तिलक के आधार पर हिंदू-साधुओं की मान्यता होने का कुपरिणाम अच्छी तरह देख चुके थे।''

यह है सच्चे अध्यात्म की कसौटी। दिन-रात जीवन, ब्रह्म, माया की गुत्थियाँ सुलझाते रहना, जगत् को असत्य बतलाना, सबसे निराला वेश और रहन-सहन रखना, पर किसी का रत्तीभर भी उपकार न करके समाज के सिर पर अपने निर्वाह का भार डाल देना अध्यात्म का लक्षण नहीं है। इतना ही नहीं, साधु-संन्यासी होकर अध्यात्मज्ञानी बनना और स्वयं निकम्मे रहकर गैर लोगों की कमाई पर आराम की, ठाठ-बाट की जिंदगी बिताने में भी ऐसे लोगों को लज्जा नहीं आती। गुरु नानक ने समझ लिया था कि यह नकली अध्यात्मवाद समाज के लिए अभिशाप सिद्ध हो रहा है और लोगों में अंधविश्वास तथा झूठी श्रद्धा का एक बड़ा कारण बना हुआ है। इसलिए उन्होंने अपने यहाँ पुजारी और झाड़ू देने वाले को पंथ में समानता का दर्जा देकर इस 'ठग विद्या' की जड़ ही काट दी।

वास्तव में आध्यात्मिकता न वेश से संबंध रखती है, न पूजा-पाठ से और न जप-तप से। इन सबको करते हुए भी मनुष्य एक नंबर का पाखंडी, आडंबरी और स्वार्थपरायण हो सकता है। हमने निर्जन जंगलों और दुरूह पर्वतों में रहने वाले लगभग नंगे साधुओं को भी सामान्य बातों पर दूसरों से लड़ते देखा है। एकाध बार तो धूनी की लकड़ियों के संबंध में तकरार होकर ऐसे साधुओं में खून-खराबे तक की नौबत आ गई। इसके विपरीत अन्य अनेक व्यक्ति गृहस्थाश्रम में रहते हुए, स्वयं अभाव सहन करके भी दूसरों की सहायता करते हैं। अवसर पड़ने पर प्राण तक देकर दूसरों की सेवा, बचाव करते हैं।

नानक जी मानते थे कि भलाई, सज्जनता आदि का गुण मनुष्य में स्वभावतः होता है, पर वह अनुकूल स्थिति न पाने के कारण छिपा रहता है। सच्चे संतों, सद्गुरु का कर्त्तव्य है कि वह इस भलाई के तत्त्व से मनुष्य को परिचित कराएँ और उसके बढ़ाने में मदद करें। यही गुरु का सबसे बड़ा उपकार शिष्य पर होता है, जिसके लिए वह गुरु को भगवान के तुल्य समझकर पूजता है, पर यह कार्य सच्चे अध्यात्मवादी, निस्स्वार्थी, निस्पृह गुरु ही कर सकते हैं।

गुरु नानक ने अपने जीवन में महत्त्वपूर्ण अनेकों यात्राएँ कीं। वे जहाँ भी गए वहाँ मानवता का ज्ञान देते रहे। उनकी शिक्षाओं में समानता, सच्चाई, सेवा, समर्पण का भाव समाहित रहता था। उनका दिया हुआ उपदेश मानवमात्र को कल्याण के पथ पर अग्रसर करता है। उनका महान व्यक्तित्व युगों-युगों तक प्रकाश और प्रेरणा देता रहेगा। हम उनके आदर्शों को अपनाकर जीवन को सफल बनाने की राह पर चल पड़े। ❐

गायत्री तपोभूमि के बैंक खातों का विवरण

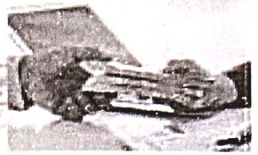

1. धर्मार्थ दान गायत्री मंदिर :
   - ० दैनिक व्यवस्था, संस्कार
   - ० अखण्ड दीप, पर्व-त्योहार
   - ० अनुष्ठान, विभिन्न प्रकार के शिविर
   - ० अन्नक्षेत्र (भोजन-व्यवस्था)
   - ० गायत्री मंदिर जीर्णोद्धार एवं पुनर्निर्माण

PAN-AAATG0704D
Bank A/C-Gayatri Mandir Trust,
★IOB Branch : Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura
IFSCODE-IOBA-0001441,
A/C No.-144102000000003,
★PNB Branch : Jawahar Inter College, Govind Nagar, Mathura, **IFSCODE** - PUNB0497600
A/C No. - 4976005700000080
★SBI Branch : Vrindavan Gate, Mandi Ram Das, Mathura, **IFSCODE** - SBIN0002503
A/C No. - 42593590624
★YES Bank Branch : Dampier Nagar, Mathura
IFSCODE - YESB0000072
A/C No. - 007288700000890

3. ० गोशाला दान, प्राकृतिक चिकित्सा

PAN-AAATY2059 F
Bank A/C-Yug Nirman Yojana Vistar Trust,
★IOB Branch : Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura
IFSCODE-IOBA-0001441,
A/C No.-144102000002051,
Bank A/C-Yug Nirman Yojana Vistar Trust (02)
★PNB Branch : Jawahar Inter College, Govind Nagar, Mathura , **IFSCODE-PUNB0497600**
A/C No. - 4976005700000062

2. पुण्यार्थ दान :
   - ० युग निर्माण विद्यालय, सप्त क्रांति आंदोलन
   - ० पं० श्रीराम शर्मा आचार्य पारमार्थिक चिकित्सालय में निःशुल्क चिकित्सा शिविर, अन्नक्षेत्र (भोजन-व्यवस्था)
   - ० आपदा निवारण, चिकित्सा सुविधा एवं अन्य पारमार्थिक प्रयोजनों के लिए (दान की राशि पर आयकर अधिनियम की धारा 80G के अंतर्गत छूट प्राप्त है।) परिजनों को PAN भेजना अनिवार्य है।

PAN-AAATY0086E
Bank A/C-Yug Nirman Yojana Trust,
★IOB Branch : Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura
IFSCODE-IOBA-0001441,
A/C No.-144102000000002
★PNB Branch : Jawahar Inter College, Govind Nagar, Mathura, **IFSCODE-PUNB0497600**
A/C No.-4976005700000053,
★SBI Branch : Vrindavan Gate, Mathura
IFSCODE-SBIN0002503
A/C No.-00000042588707132

4. ० युग निर्माण योजना (हिंदी) मासिक,
   - ० युग शक्ति गायत्री (गुजराती) मासिक,
   - ० साहित्य, हवन सामग्री, प्रचार सामग्री,
   - ० पं. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय

PAN-AAATY2059 F
Bank A/C-Yug Nirman Yojana Vistar Trust (Prachar Khata)
★IOB Branch : Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura
IFSCODE-IOBA0001441,
A/C No.-144102000002021
Bank A/C-Yug Nirman Yojana Vistar Trust (01)
★PNB Branch : Jawahar Inter College, Govind Nagar, Mathura, **IFSCODE-PUNB0497600**
A/C No.-4976005700000071
Bank A/C-Yug Nirman Yojana Vistar Trust
★SBI Branch : Vrindavan Gate, Mandi Ram Das, Mathura, **IFSCODE** - SBIN0002503
A/C No. - 42597926175

E-Mail ID : yugnirman@yugnirmanyojna.org
Website : www.yugnirmanyojna.org

उज्ज्वल-भविष्य की झलक

झर रही हैं देव संस्कृति की सजल शीतल फुहारें,
अब धरित्री पर निराशा से भरा कोई न होगा।

जो प्रवासी जन अभी तक मूल संस्कृति से कटे थे,
थे अपरिचित से परस्पर, जो बहुत बिखरे-बँटे थे,
जी रहे थे जो अकेले-से सुरक्षा की कमी में,
जो नहीं अपनत्व पाते थे वहाँ के आदमी में,

भूमि से आकाश तक अब यज्ञमय सब कुछ हुआ है,
अब कहीं असहाय आतंकित डरा कोई न होगा।

अब न धरती का सुरक्षा-कवच दुर्बल और होगा,
माँ समझने का प्रकृति को, एक नूतन दौर होगा,
फिर न उसकी शक्तियों का और दोहन हो सकेगा,
वायु जल अथवा धरा का फिर न शोषण हो सकेगा,

जल न पाएँगी वनस्पतियाँ, न झुलसेंगी लताएँ,
उपवनों में फूल मुरझाया झरा कोई न होगा।

फिर प्रखरता और पावनता मिलेंगे, एक होंगे,
गाँव देवालय बनेंगे, नागरिक फिर नेक होंगे,
शांति सरिता में बहेगी, प्यार पर्वत से झरेगा,
स्नेह-समता-लोकहित का भाव हृदयों में भरेगा,

फिर नहीं होगा कहीं अन्याय का तांडव भयंकर,
हर जगह सद्भाव होगा, दूसरा कोई न होगा।

—शचींद्र भटनागर

गायत्री तपोभूमि, मथुरा

परमपूज्य गुरुदेव के अवतरण दिवस पर पर्व पूजन

अवतरण दिवस पर सायं दीपयज्ञ आयोजन

आश्विन नवरात्र अनुष्ठान सामूहिक संकल्प

युग निर्माण योजना

(मासिक) R.N.I No. 13636/64

प्र.ति. 17.10.2025
Regd No. Mathura-024/2024-2026
Licensed to Post Without Prepayment
No. Agra/WPP-10/2024-2026

सर्वपितृ अमावस्या सामूहिक श्राद्ध-तर्पण, पारिवारिक सम्मेलन

स्कैन करें

वेबसाइट) (यूट्यूब) (फेसबुक) (इंस्टाग्राम) (व्हाट्सऐप) (एक्स)

स्वामी युग निर्माण योजना ट्रस्ट, मथुरा के लिए मृत्युंजय शर्मा द्वारा युग निर्माण योजना ट्रस्ट, मथुरा से प्रकाशित तथा युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा से मुद्रित। संपादक- ईश्वर शरण पाण्डेय, सह संपादक-सूर्यमणि तिवारी, दीनदयाल अमृते
दूरभाष नंबर-(0565) 2530115, 2530399, 2530128. मो.- 09927086289, 09927086287